स्वदेशी पत्रिका

वर्ष-15, अंक-9, भाद्रपद-आश्विन 2064, सितम्बर, 2007

संपादक
विद्यानंद आचार्य

कार्यालय
धर्मक्षेत्र, सेक्टर-8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली-110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011-26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 से मुद्रित।

टंकण एवं सज्जा : **प्रेम जोया**

आवरण लेख - 4

वैश्वीकरण के इस दौर में उभर रहे नए एशिया में भारत-जापान की दोस्ती नए रणनीतिक समीकरण बना सकती है। सिंजो एबे की भारत यात्रा इस मायने में महत्त्वपूर्ण है।

कॅवर पेज

अनुक्रम

आवरण लेख
जापान और भारत एक स्वाभाविक सहयोगी
- ब्रह्म चेलानी 4
नया एशिया कहीं साम्राज्यवादी तो नहीं
- डॉ. भरत झुनझुनवाला 8

कृषि
123 समझौते से ज्यादा खतरनाक है कृषि पर ''भारत-अमरीकी ज्ञान पहल''
- देवेन्द्र शर्मा 11

चिंतन
संवाद ही एक मार्ग
- डॉ. मुरली मनोहर जोशी 13

विकास
कहाँ है लोक कल्याणकारी राज्य?
- निरंकार सिंह 16

पुस्तक समीक्षा
सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर एक प्रामाणिक पुस्तक
- शांडिल्य 18

लेख
दुनिया को भारत की जरूरत
- डॉ. अश्विनी महाजन 20

राष्ट्र
स्वतंत्रता दिवस पर प्रधानमंत्री का भाषण 'गुड फॉर नथिंग'
- डॉ. सूर्यप्रकाश अग्रवाल 23
किसान आन्दोलनों का बढ़ता प्रभाव
- विश्वेन्द्र सिंह चौहान

उद्योग
सार्वजनिक उद्यमों की उल्लेखनीय उपलब्धि
- रुद्रदत्त 28

आन्दोलन
खुदरा व्यापार को बचाना देशहित में आवश्यक- स्वामी चिन्मयानंद
- स्वदेशी संवाद 32

रपट
तिरूपति में स्वजाम का राष्ट्रीय विचार वर्ग संपन्न
- स्वदेशी संवाद 34

समाज
बिहार में अनूठे गोकुल विश्वविद्यालय की स्थापना
- स्वदेशी संवाद 39

पाठकनामा 2

समाचार परिक्रमा 40

डब्ल्यूटीओ 44

पाठकनामा

किसानों के हित में मायावती का फैसला

ठेका खेती के खिलाफ किसानों के हित में मायावती का फैसला न केवल सराहनीय है बल्कि राजनीतिक दृष्टि से भी अच्छी सूझबूझ का परिचायक है। मायावती को जब पता चला कि उत्तर प्रदेश के अधिकतर किसान ठेका खेती के खिलाफ हैं तो उन्होंने अपनी प्रस्तावित नई कृषि नीति को बदलकर यह साबित कर दिया कि उन्हें ऐसा कोई फैसला मंजूर नहीं जो किसानों के हित में न हो। इससे कि पहले, पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव सहित अन्य राजनीतिक दलों के नेता खुदरा क्षेत्र को बड़े घरानों के लिए खोले जाने के विरोध में किसानों तथा व्यापारियों को मायावती सरकार के खिलाफ एकजुट कर पाते, मायावती ने झटपट प्रेस कांफ्रेस बुलाकर अपनी कृषि नीति वापस लेते हुए यह घोषणा कर दी कि वे ऐसा कोई फैसला नहीं करेंगी जिससे किसानों एवं व्यापारियों के हित न जुड़े हों। मायावती ने इसी के साथ रिलायंस फ्रेस को बंद कराकर व्यापारियों को बड़ी राहत दी है। जो इस बात का सबूत है कि वे छोटे व्यापारियों का रोजगार प्रभावित नहीं करना चाहती। मायावती ने प्रेस के सामने बाकायदा ऐलान किया उनकी सरकार कोई भी फैसला किसानों की इच्छा के विरुद्ध नहीं करेगी। मायावती के इस निर्णय के बाद राजनीति के बड़े–बड़े महारथी भी उनके सामने बौने साबित हो रहे हैं।

रानी महायान
समाजसेविका भोगल, दिल्ली

❑❑❑

गेहूँ के आयात का क्या औचित्य?

सरकार की जनविरोधी नीतियों के चलते हमारे देश का अन्नदाता किसान आत्महत्या कर रहा है, वहीं सरकार ने गेहूं के आयात का फैसला कर आग में घी डालने का काम किया है। भरपूर उत्पादन के बावजूद इस देश में गेहूं का आयात किसानों के हित में नहीं है। किसानों की बात पर अगर विश्वास करें तो देश में गेहूं का उत्पादन अपेक्षा से अधिक हुआ है, सरकार भी गेहूं के भंडार भरे होने का दावा करती रही है, इसके बावजूद गेहूं के आयात का आखिर क्या औचित्य है। सरकार के गेहूं आयात के फैसले का किसान विरोध कर रहे हैं। किसान संगठन आयात के सख्त खिलाफ है। किसान ऊंचे समर्थन मूल्य की मांग कर रहे हैं। सरकार की इस नीति का फायदा उठाकर निजी कंपनियां गेहूं खरीद में सक्रिय हैं। वे समर्थन मूल्य से ज्यादा दाम देकर गेहूं का भंडार कर रही हैं। पिछले साल भी कंपनियों ने गेहूं खरीदा था, जबकि सरकारी एजेंसियाँ नहीं खरीद पाई थीं। अच्छी फसल के बावजूद अगर गेहूं का आयात करना है तो यह खाद्यान्न आत्मनिर्भरता का कमजोर होना साबित करता है। सरकार का यह फैसला केवल निराशाजनक ही नहीं बेहद चिंता का विषय भी है। कितना हास्यास्पद है कि इस वर्ष एक तरफ इस देश में अच्छी फसल होने की दुहाई दी जा रही है वहीं दूसरी और सरकार ने 10 लाख टन विदेशी गेहूं के आयात का निर्देश भी जारी कर दिया है। केन्द्र सरकार जो पैसा गेहूं के आयात पर खर्चना चाहती है उसे न्यूनतम समर्थन मूल्य और वृद्धि के रूप में किसानों को देने में क्यों परहेज किया गया, यह सरकार की नीयत पर प्रश्नचिन्ह लगाता है। देश में खाद्यान्न भंडार में कमी नहीं होने के बावजूद गेहूं का आयात करना घोटाले की नीयत से किए गए फैसले की ओर संकेत करता है।

नीतू दुबे,
(पी.जी.डी.ए.वी कॉलेज), दिल्ली

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

''धर्मक्षेत्र'' शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022
दूरभाष : 26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com
अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क ***'स्वदेशी पत्रिका'*** दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।
वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए
आजीवन सदस्यता शुल्क: 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

देश को आजादी तो मिली लेकिन इसका वास्तविक लाभ गरीबों और पिछड़ों को नहीं मिला।

श्रीमती प्रतिभा पाटिल
(राष्ट्रपति)

परमाणु समझौते में बदलाव नहीं होगा, वामदल इस मुद्दे पर यदि समर्थन वापस लेना चाहें तो ले लें।

डॉ. मनमोहन सिंह
(प्रधानमंत्री, भारत)

---

123 समझौता उन्हें पूर्णतः अस्वीकार्य है, क्योंकि यह अमरीका से 'राजनीतिक साझेदारी' नहीं बल्कि 'राजनीतिक गुलामी' की ओर ले जाता है।

लाल कृष्ण आडवाणी
(भाजपा के शीर्ष नेता)

टी.वी. चैनलों की खबरें बहुत ही स्तरहीन एवं ओछी हो गई हैं। लाइसेंस लेते हैं किसी और काम के लिए एवं दिखाते हैं कुछ और, यह उचित नहीं है।

प्रियरंजन दासमुंशी
(सूचना एवं प्रसारण मंत्री, भारत सरकार)

हिन्द महासागर एवं प्रशांत महासागर के संगम पर एक नया महाएशिया जन्म ले रहा है।

सिंजो एबे
(प्रधानमंत्री, जापान)

मनमोहन सिंह ने अमरीका के साथ 123 समझौता करके जैसा विश्वासघात किया है, वैसा चीन में करने पर उन्हें गोली मार दी जाती।

जॉर्ज फर्नांडीज
(पूर्व केन्द्रीय रक्षा मंत्री)

आरक्षण जिस उद्देश्य के लिए लाया गया है, उद्देश्य पूरा हो जाने पर इसे समाप्त हो जाना चाहिए। आरक्षण अनिश्चितकाल के लिए नहीं है। इसे किसी न किसी दिन तो जाना ही होगा।

अरिजीत पसायत
(न्यायाधीश, सर्वोच्च न्यायालय)

संपादकीय

राष्ट्रीय नेतृत्व में निर्णय की दृढ़ता आवश्यक

भारत और अमरीका के बीच हाल ही में संपन्न 123 परमाणु समझौता लगभग निर्णायक दौर में है। अमरीका, भारत एवं परमाणु ईंधन निर्यातक देशों के साथ ही अन्तरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा संगठन से कुछ प्रमुख एवं औपचारिक निर्णयों के बाद यह समझौता भारत और अमरीका के लिए प्रभावी हो जाएगा। 123 परमाणु समझौते ने देश की संप्रभुता पर आघात एवं सामरिक योजनाओं पर भविष्य में पड़ने वाले दुष्परिणाम को लेकर देश के भीतर व्यापक बहस को जन्म दिया है। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने स्पष्ट रूप से कह दिया कि वे समझौते से पीछे हटने वाले नहीं हैं। यदि वे परमाणु समझौते से अपना मुँह मोड़ते हैं तो इससे अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर उनकी सरकार की साख को धक्का पहुँचेगा और कार्यपालिका में विश्वास का क्षरण होगा। प्रधानमंत्री का संदेह उचित है कि यदि वे समझौते पर अब पीछे हटते हैं तो एक सत्तारूढ़ सरकार के पास समझौता करने संबंधी अधिकार पर प्रश्नचिन्ह लग जाएगा। लेकिन घरेलू घटनाक्रम एवं प्रधानमंत्री के निर्णयों और वक्तव्यों से आम लोगों के बीच गलत संदेश गया है। यह ठीक है कि सरकार को अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर वर्तमान व्यवस्था के तहत संसद की अनुमति के बिना समझौता करने का अधिकार है लेकिन वहीं दूसरी ओर आइने की तरह यह भी स्पष्ट है कि इस मुद्दे पर प्रधानमंत्री को संसद के भीतर बहुमत प्राप्त नहीं है। संसद सत्र में इस मुद्दे को लेकर प्रमुख विपक्षी दल अड़ी हुई है और संसद की कार्रवायी चलने नहीं दे रही है। वामपंथी दलों जिसकी वैशाखी के सहारे यह सरकार चल रही है, पहले तो सरकार गिराने की धमकी पर उतर आए थे और बाद में जब उन्हें लगा कि यह अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारने के समान निर्णय है तो सदा की भाँति एक 'देखरेख समिति'' के निवाले पर मौन साध गए। हालांकि विरोध कर रही भारतीय जनता पार्टी और वामपंथी पार्टियों द्वारा विरोध का आधार अलग हो सकता है, लेकिन सच्चाई यह है कि इस मुद्दे पर वर्तमान संप्रग सरकार अल्पमत में आ गई है जो भविष्य में इसके कार्यपालक निर्णयों पर प्रश्नचिन्ह लगाएगा। यह स्थिति लोकतंत्र के लिए ठीक नहीं है। या तो सत्तारुढ़ सरकार अपने बहुमत का उपयोग अपने निर्णयों को वैधानिकता प्रदान करने के लिए करे या फिर पुनः देश की जनता का विश्वास हासिल करे। ''चित भी मेरी और पट भी मेरी'' को लोकतंत्र में न्यायोचित नहीं कहा जा सकता है। आजादी के बाद के कालखंड में देश के वर्तमान नेतृत्व द्वारा दूरदृष्टिहीन निर्णयों से देश की जो हास्यास्पद स्थिति बनी है वह पूर्व में कभी नहीं थी। इतना ही नहीं यह हास्यास्पद स्थिति अपरिपक्व अनुभवों का ही उदाहरण है। मसलन देश के प्रधानमंत्री पत्रकार वार्ता में यह कहते हैं कि विपक्षी दल भारतीय जनता पार्टी उनकी मृत्यु के लिए हवन का आयोजन की थी। आम आदमी भी समझ सकता है कि इससे विपक्ष को क्या लाभ मिलने वाला है, क्योंकि उनके बाद उनके दल का नेता ही उनका स्थान ले पाएगा। इसी प्रकार वामपंथियों को सरकार से समर्थन वापसी के लिए धमकी देना यदि अनिच्छा से दिया गया वक्तव्य है तो लगता है कि प्रधानमंत्री आत्मनियंत्रण में असफल हैं। यह दोनों स्थितियाँ देश के लिए चिंताजनक हैं और संतुलन के अभाव को प्रदर्शित करती हैं। क्योंकि ऐसे असंतुलित नेतृत्व से स्वदेशी परमाणु कार्यक्रम के विकास एवं विस्तार के भारतीय वैज्ञानिकों की रणनीतियों एवं योजनाओं पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि हमने अमरीकी सहयोग के बिना या यूँ कहें कि अमरीका द्वारा प्रतिबंध लगाए जाने के बावजूद तकनीकी के कई क्षेत्रों में कीर्तिमान एवं प्रतिमान स्थापित किए हैं। परमाणु ईंधन के पुनःप्रसंस्करण का अधिकार, त्रिस्तरीय परमाणु कार्यक्रम, देश के लोगों की इस संबंध में वाजिब चिंताएं एवं विदेश नीति पर उभरी सभी समस्याओं एवं संदेहों का निराकरण 123 परमाणु समझौते के प्रभावी होने से पहले करना आवश्यक है। इस विषय पर अंग्रेजी पत्र पत्रिकाओं ने एक दो अवसरों को छोड़कर, पक्षपात रहित ढ़ंग से एवं आम आदमी की अपेक्षा के अनुरूप ईमानदारी से कभी भी अपनी सही भूमिका नहीं निभायी है। एक राजनीतिक समूह के रूप में देश के वामपंथियों को अपना एक रुख रखने का अधिकार है लेकिन अमरीका एवं चीन के साथ संबंधों को लेकर उनका व्यवहार हमेशा परेशानी पैदा करने वाला रहा है। जब भारतीय अर्थव्यवस्था के संवेदनशील क्षेत्रों में चीनी निवेश का मुद्दा आता है तो भारतीय वामपंथियों को इसमें कोई दोष दिखायी नहीं देता है। ठीक इसी प्रकार अरूणाचल प्रदेश पर चीन के रूख को राष्ट्रहित के विरुद्ध जाते हुए भी भारतीय वामपंथियों द्वारा समर्थन करना इस बात की पुष्टि करता है कि भारतीय कम्युनिस्ट चीनी कम्युनिस्ट की शाखाएं हैं न कि भारत में उनका अपना अलग अस्तित्व है। पहले और आज भी अनेक निर्णायक क्षणों एवं प्रमुख मुद्दों पर वामपंथियों की ढुलमुल नीतियों एवं परस्पर विरोधाभासी रुख से उनका अस्तित्व और अधिक संदोहास्पद बना है।

भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह एवं जापानी प्रधानमंत्री सिंजो एबे परस्पर अभिवादन करते हुए

जापान और भारत एक स्वाभाविक सहयोगी

■ ब्रह्म चेलानी

जापान के प्रधानमंत्री सिंजो एबे ने पिछले महीने भारत की यात्रा सम्पन्न की। उनकी यात्रा की पृष्ठभूमि के समय भारत में अमरीकी–भारत नाभिकीय समझौतों से उठे बवंडर का वातावरण था। दूसरी ओर सिंजो जिस समय भारत यात्रा पर आ रहे थे ठीक उससे एक सप्ताह पहले जापान के उच्च सदन के चुनाव में उनकी पार्टी की हार हुई थी। लेकिन भारत में जापानी प्रधानमंत्री को काफी सम्मान दिया गया। उन्होंने भारतीय संसद को भी सम्बोधित किया। यह ऐसा सम्मान था जो पिछले वर्ष भारत के दौरे पर आए दुनिया के सबसे ताकतवर देश अमरीका के राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू बुश एवं हमारे पड़ोसी देश चीन के राष्ट्रपति हु जिंताओं को भी नहीं मिला था। भारत और जापान एशिया महाद्वीप के सबसे बड़े और लगभग सबसे विकसित लोकतांत्रिक देशों का प्रतिनिधित्व करते हैं। भारत द्वारा जापान के प्रधानमंत्री को यह सम्मान देना इस बात की ओर संकेत करता है कि क्षेत्रीय शक्ति संतुलन के लिए इन दो प्रमुख देशों में रणनीतिक साझेदारी आवश्यक एवं समय की मांग है।

वास्तव में इससे पूर्व जापान में जितनी भी सरकारें हुई, उनके प्रमुखों ने कभी यह प्रयास नहीं किया कि भारत के साथ एक अच्छी साझेदारी विकसित हो। लेकिन सिंजो एबे ने इस बार यह हिम्मत दिखाई है। उनके भाषणों के अंशों से भी

भारतीय संसद को संबोधित करने जाते सिंजो एबे

यह प्रकट होता है। प्रधानमंत्री बनने से पूर्व ही उन्होंने अपनी लिखी एक पुस्तक में इस बात के साफ संकेत दे दिए थे कि भारत जापान का सहज एवं प्रमुख साझेदार बनने की क्षमता और योग्यता रखता है। 'एक सुन्दर राष्ट्र की ओर' पुस्तक में उन्होंने तीन पन्नों में विस्तार से इस बात का उल्लेख किया है कि जापान किस प्रकार भारत के साथ सम्बन्ध स्थापित करके अपने हितों को मजबूती प्रदान कर सकेगा। वे कहते हैं – ''इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि आगामी दशक में भारत जापान संबंद्ध भारत अमरीकी और भारत चीन सम्बन्ध से आगे निकल जाएगा।''

ये वही सिंजो एबे हैं जिन्होंने ऑस्ट्रेलिया, जापान और अमरीका के बीच त्रिपक्षीय सुरक्षा वार्ता में भारत को शामिल कर इसे चतुष्पक्षीय सुरक्षा वार्ता बनाकर एक नये लोकतांत्रिक शांति प्रयास को जन्म दिया था। सिंजो से पूर्व के प्रधानमंत्री कोइजूमी ने ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड एवं भारत के साथ मिलकर पूर्व एशियाई देशों के एक समूह का निर्माण करना चाहते थे ताकि चीन को अलग–थलग किया जा सके।

सिंजो की घरेलू मोर्चे पर पराजय से उनके रिकार्ड में कमी तो आई है जिससे उनकी नेतृत्व क्षमता एवं आगामी राजनीतिक संभावनाओं पर प्रश्न चिन्ह भी खड़ा हो सकता है। लेकिन सिंजो का जापान का प्रधानमंत्री बनना इस बात का प्रतीक है कि जापान की राजनीति में एक प्रभावी परिवर्तन हुआ है और जो क्षेत्रीय राजनीति में प्रखरता से अपनी मजबूती का एहसास दिला सकता है। उपरी सदन में सिंजो की हार से उनकी राष्ट्रवादी नीतियों पर प्रभाव पड़ेगा, खासकर अमरीकी हाथों जापान की पराजय के बाद जापान पर लादी गयी शांति शर्तों का। यहां एक बात का उल्लेख करना आवश्यक होगा की आजादी के बाद जहां भारत के संविधान में कई बार संशोधन किए गए, जापान ने अपने कानून में एक बार भी संशोधन नहीं किया है। जापानी नागरिकों ने इस बात के संकेत दिए हैं कि उन्हें एबे की सुन्दर जापान की परिकल्पना की तुलना में, जो टॉएका सुधार (645 ई.पू) एवं मेजी पुनर्स्थापना (1868) पर आधारित है, की अपेक्षा अपने देश की अर्थव्यवस्था की अधिक चिंता है।

एबे का मेजबान के रूप में भारत एवं उसके प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की चिंता भी स्वाभाविक है क्योंकि एक बार समझौता होने के बाद मित्र देश में यदि सत्ता परिवर्तन हुआ तो जारी समझौते पर प्रश्नचिन्ह लग सकता है। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह पर वैसे भी उनके सहयोगी वामपंथियों ने बन्दूक तान रखी है ताकि वे भारत – अमरीका नाभिकीय समझौते पर आगे न बढ़ सकें। डॉ. मनमोहन सिंह अपनी उम्र के सातवें दशक में पहुँच चुके हैं। परमाणु नीति पर उनकी नेतृत्व क्षमता में कमी का पूरा आभास ठीक उसी प्रकार दिखाई पड़ता है जिसप्रकार 1989 के बाद इस देश के लगभग सभी नेतृत्व में दिखाई पड़ा था। 1990 की शुरूआत में देश की अर्थव्यवस्था की बागडोर सम्भालने वाले डॉ. मनमोहन सिंह 2004 में अचानक उस समय प्रधानमंत्री बन गये, जब कांग्रेस पार्टी की मुखिया श्रीमती सोनिया गांधी ने अपने बदले मनमोहन सिंह का नाम प्रधानमंत्री पद के लिए प्रस्तावित किया।

चूंकि दोनों देश लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले देश हैं, इसलिए देश की घरेलू परिस्थितियों का राजनीतिक जीवन पर प्रभाव पड़ना अवश्यंभावी हो जाता है। जापान की लोकतांत्रिक परम्पराएं एवं एशिया और एशिया से बाहर मिलती जुलती रणनीतिक समानताएं जापान को भारत का सही सहयोगी बनाती हैं। दोनों देश संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में परिवर्तन चाहते हैं और एक ध्रुवीय एशिया की व्यवस्था को बदलना चाहते

भारत जापान के बीच द्विपक्षीय घोषणा पत्र के प्रमुख बिंदु

- दोनों देशों की राजधानी में प्रतिवर्ष उच्चस्तरीय बातचीत का आयोजन करना।
- विदेश मंत्री स्तर तक रणनीतिक वार्तालाप को नियमित कर संस्थागत रूप देना।
- द्विपक्षीय आर्थिक साझेदारी सहयोग पर बल ।
- दोनों देशों के प्रमुख उद्यमियों के समूहों का एक फोरम बनाना।
- विज्ञान एवं तकनीकी के साथ रक्षा क्षेत्र में सहयोग बढ़ाना।
- युवाओं से आवागमन को प्रोत्साहित करना एवं जापानी भाषा का भारत में विस्तार।
- बहुपक्षीय संस्थाओं यथा सार्क, संयुक्त राष्ट्र आदि में आपसी सहयोग बढ़ाना।
- ऊर्जा, पर्यावरण, अप्रसार आदि क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाना।

जापान–भारत व्यापार (बिलयन–येन)

वर्ष	1998	1999	2000	2001	2002	2003	2004	2005
आयात	314.4	275.6	267.9	233.7	233.9	276.3	329.1	388.2
निर्यात	284.8	255.7	284.2	269.3	262.0	252.1	282.6	352.4
कुल	913.6	531.3	552.1	503.0	495.9	528.4	611.7	740.6
जापानी प्र.पूँ. नि.भारत में	32.9	23.2	18.5	18.1	37.8	9.9	15.0	29.6

स्त्रोत : वित्तमंत्रालय जापान

हैं। इतना ही नहीं भारत और जापान पड़ोसी देशों के साथ दुश्मनी के मामले में लगभग एकसमान हैं।

एशिया महादेश में हाल के वर्षों नए समीकरण उभर रहें हैं जिसमें महत्त्वपूर्ण ढंग से शक्ति संतुलन की नयी व्यवस्था पनप रही है। भारत जापान के बीच आपसी सहयोग का आधार इन नए उभरते शक्ति समीकरणों को पहचानकर आपसी साझेदारी बढ़ाने की है। उन दोनों देशों के बीच न तो कोई इतिहास में नकारात्मक सम्बन्धों का उदाहरण मौजूद है और न ही किसी भी प्रकार के राजनैतिक विरोधों का। सबसे बड़ी बात यह है कि दोनों देशों के बीच आम जनता के विचार भी एक दूसरे से मिलते–जुलते एवं सकारात्मक हैं। बहुत से जापानी अभी भी न्यायमूर्ति राधा विनोदपाल के उस निर्णय का आभार मानते हैं जो उन्होंने 1946 में टोकियो सुनवायी के दौरान दिया था। (देखें बॉक्स अगले पृष्ठ पर) यह सुनवायी द्वितीय विश्व युद्ध के अपराधियों से सम्बन्धित था। जिसमें राधा विनोद पाल जापानी लोगों का पक्ष लिया था। जापान की टोकियो यासूकूनी मठ के अहाते में राधा विनोदपाल की एक प्रतिमा भी सम्मान देने हेतु लगाई गई है।

नागासाकी एवं हिरोशिमा पर परमाणु बम गिराये जाने की 62वीं बरसी पर जापान ने महत्त्वपूर्ण रणनीतिक परिवर्तन के संकेत दिए। ज्ञातव्य है कि जापान विश्व का अमरीका के बाद सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाला देश है एवं चीन की तुलना में आबादी बहुत कम है। एशिया में अर्थव्यवस्था के मामले में जापान की अपनी अलग सफलता की कहानी है। अब चीन एवं भारत के उदय से पूरे विश्व में एशिया का उदय डेढ़ सौ साल के बाद दिखाई पड़ रहा है। इस परिस्थिति में एशिया की सुरक्षा आवश्यक है और इस सुरक्षा के लिए भारत, जापान और चीन के बीच आपसी सम्बन्धों के साथ ही अमरीका के साथ सम्बन्धों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होगी। व्यापार में बढ़ते आंकड़े सुरक्षा की गारंटी नहीं हो सकते। चीन, जापान का सबसे बड़ा व्यापारिक सहयोगी है बावजूद इसके चीन हमेशा जापान के विरूद्ध नीतियां अपनाता रहता है। इधर चीन और भारत के बीच तेजी से व्यापार में वृद्धि हो रही है। बावजूद इसके दोनों देशों के बीच जारी सीमा विवाद का कोई शांतिपूर्ण समाधान दिखाई नहीं पड़ता है।

शांतिपूर्ण वातावरण निर्माण के लिए जापान एवं चीन और चीन एवं भारत के बीच स्थाई राजनैतिक संबंध विकसित करने होंगे जिससे इस क्षेत्र की सुरक्षा एवं आर्थिक विकास का माहौल अनुकूल बना रहे। एक मजबूत भारत, चीन और जापान का विकास और इन देशों के बीच स्वाभाविक सहअस्तित्व एशिया के विकास के लिए आवश्यक है ताकि एशिया महादेश विश्व में अपनी भूमिका प्रभावी ढंग से निभा सके।

अगर इन तीनों देशों के बीच चीन अ है और भारत और जापान ब और स है तो ब + स हमेशा अ से बड़ा होगा। इसलिए भारत और जापान एक–दूसरे के स्वाभाविक

कौन हैं सिंजो एबे

सिंजो एबे का जन्म 21 सितम्बर 1954 को जापान में हुआ था। 26 सितम्बर 2006 को हुए राष्ट्रीय डाईट के चुनाव में उन्हें जापान का प्रधानमंत्री चुना गया। जापान युद्ध के बाद जन्मे और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के जापान के वे सबसे कम उम्र के प्रधानमंत्री हैं। एबे का जन्म भी जापान के एक परम्परागत राजनीतिक परिवार में हुआ, और उन्होंने राजनीतिशास्त्र में ही उच्च शिक्षा प्राप्त की। विशेष अध्ययन के लिए वे अमरीका भी गए। 1993 में उन्होंने राजनीति में प्रवेश किया और पहली बार यामा गुची से विजयी घोषित हुए। इससे पूर्व योशिरो मोरी एवं जूनीकिरो कोइजूमी के प्रधानमंत्रित्व में मंत्री पद का दायित्व भी संभाला। अपनी योग्यता एवं प्रतिभा के बल पर वे निरंतर आगे बढ़ते गए और कोइजूमी के प्रमुख केबिनेट सचिव बनाए गए। एबे उस समय लोकप्रिय हुए जब उत्तरी कोरिया के विरुद्ध उन्होंने कठोर रुख अपनाया। इसके कारण एबे लिबरल डेमोक्रटिक पार्टी के अध्यक्ष चुन लिए गए। सिंजो के पिता सिंतारो एबे जापान के विदेश मंत्री थे। सिंतारो एबे के दादा नवुसुके किशी जापान के पूर्व प्रधानमंत्री थे।

सिंजो एबे की योजनाओं में वृहत एशिया की परिकल्पना है जिसमें एशिया महादेश के सफलतम लोकतांत्रिक देशों को एक मंच पर लाने की योजना है। भारत के प्रति सिंजो की विदेश नीति प्रगामी एवं व्यवहारिक दिखाई पड़ती है। उन्होंने एशिया महादेश में भारत की बढ़ती आर्थिक शक्ति एवं सामरिक सामर्थ्यों का बखूबी अनुमान लगाया है। भारत ही ऐसा देश रहा जिसके साथ जापान के किसी भी प्रकार के संघर्ष का इतिहास नहीं रहा है। इसके विपरीत भारत के स्वाधीनता आंदोलन के समय नेताजी सुभाष चन्द्र बोस एवं भारतीय राष्ट्रीय पार्टी को जापान में भरपूर सहयोग देने का गौरवपूर्ण इतिहास रहा है।

प्रशांत और हिंद महासागर आज एक स्वतंत्र और समृद्ध सागर के रूप में गतिशील संगम का निर्माण कर रहा है। इस 'विशाल एशिया' ने भौगोलिक सीमाओं को तोड़ दिया है और अब इसने एक विशिष्ट रूप लेना शुरू कर दिया है। हम दो देश ही ऐसे हैं जिसमें यह सुनिश्चित करने की योग्यता तथा दायित्व है। हम जितना ही सागरों को पोषित और समृद्ध करेंगे, ये हर दृष्टि से उतना ही अधिक पारदर्शी सागर बनकर विशाल रूप धारण करेंगे।

सिंजो एबे द्वारा भारतीय संसद को संबोधित भाषण से उद्धृत अंश

सहयोगी बनने के लिए बाध्य हैं। यहां यह सुनिश्चित करना होगा कि इन संबंधों के विकसित होने से चीन इसे अन्यथा न ले।

भारत के लिए जापान के साथ आर्थिक और राजनैतिक मित्रता बहुध्रुवीय एशिया के विकसित होने के पक्ष में है। इसलिए अगस्त 2000 में भारत और जापान के बीच सम्पन्न समझौते को 21वीं सदी का वैश्विक समझौता घोषित किया गया था और जिसमें रणनीतिक शब्द का समावेश बड़ी जिम्मेदारी के साथ किया गया था। पिछले दिसम्बर में जब प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह का जापान दौरा हुआ और वहां रणनीतिक वैश्विक साझेदारी पर हस्ताक्षर हुए थे। इस साझेदारी में भी राजनैतिक, कूटनीतिक स्तर पर द्विपक्षीय एवं क्षेत्रीय सहयोग कि बातें उठाई गई थीं। साथ ही तकनीकी, सुरक्षा एवं अवसंरचना में निवेश जैसे प्रमुख मुद्दों पर भी चर्चा हुई थी।

हाल के वर्षों में सुरक्षा के मुद्दे पर इन देशों से भारत को अपेक्षाकृत अधिक सहयोग मिला है। जापान की तीनों सेनाओं के प्रमुखों ने पिछले वर्ष दो महीने के भीतर भारत का दौरा कर इस बात के संकेत दिए हैं कि आने वाले दिनों में सुरक्षा के मुद्दों पर भारत और जापान और अधिक सहयोगात्मक रवैया अपनाएगा। भारत के हिंद महासागर में अमरीका द्वारा प्रायोजित नौसैनिक अभ्यासों में जापानी जहाजों का जिस तरह सहयोग प्राप्त हुआ उससे निकट भविष्य में भारत और जापान के बीच में त्वरित समय में प्रत्यक्ष नौसैनिक अभ्यास की पृष्ठभूमि बन गयी है। इससे पूर्व पिछले वर्ष भारत जापान के बीच होने वाले युद्धाभ्यास में भारतीय नौसैनिक जहाज ने जापान के योकोसुका बन्दरगाह पर चार महीने पहले पहुंच कर जापान एवं अमरीकी नौसैनिक जहाजों के साथ टोकियो की खाड़ी में अभ्यास किया था।

एशिया महादेश में उभरते भू–उर्जा की रणनीति के कारण भी भारत और जापान के बीच स्वाभाविक साझेदारी को पुष्ट करते हैं। दोनों देश अपनी ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए अरब देशों से कच्चे तेल के आयात पर निर्भर रहता है। इन कच्चे तेलों के आयात का मार्ग फारस की खाडी है। भारत और जापान के बीच यदि रणनीतिक साझेदारी बनती है तो गैर पश्चिमी देशों में यातायात के मार्गों की सुरक्षा एवं व्यावसायिक लाभ ये दोनों देश उठा सकते हैं। शायद महासागरों की अर्थव्यवस्था का महत्त्व समझकर ही जापानी प्रधानमंत्री सिंजो एबे ने संसद में अपने संबोधन में भारत जापान की मैत्री को दो महासागरों का संगम शब्द से सम्बोधित किया था। ❖

क्या है ''टोकियो ट्रॉयल''

टोकियो ट्रॉयल के नाम से बहुचर्चित यह सुनवायी द्वितीय विश्व युद्ध के अपराधियों को सजा देने के लिए गठित की गयी थी। इस सुनवायी में जापान के राजाओं पर तीन प्रकार के आपराधिक मामले सुनवायी के लिए लाए गए थे, जो निम्न लिखित हैं। 1. शांति को भंग करने का अपराध, 2. युद्ध अपराध, 3. मानवता के विरुद्ध अपराध। इसमें शांति को भंग करने का अपराध इस आधार पर तय किया गया था कि जापान ने गोपनीय ठंग से युद्ध की शुरूआत की थी। युद्ध अपराध और मानवता के विरुद्ध अपराध युद्ध के समय हुए अत्याचार एवं नानकिंग नरसंहार से संबधित थे। टोकियो सुनवायी के लिए गठित ट्रिब्यूनल ने तीन मई 1946 को सुनवायी शुरू की जो 12 नवम्बर 1948 को समाप्त हो गयी। 25 जापानी सेना और राजनीतिक अधिकारियों को क्रंमाक 1 की अपराध के लिए दोषी ठहराया गया। 5700 जापानी नागरिकों को क्रमांक 2 – 3 के तहत अपराध की सजा सुनायी गयी।

न्यायमूर्ति राधा विनोद पाल (जनवरी 1886 से 10 जनवरी 1967) एक भारतीय न्यायविद थे जो टोकियो ट्रॉयल के लिए गठित इंन्टरनेशनल मिलिट्री ट्रिब्यूनल फॉर फार ईस्ट के सदस्य थे। इनकी शिक्षा दीक्षा कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रेसिडेंन्सी कॉलेज एवं लॉ कालेज में हुई थी। बाद में 1941 में राधा विनोदपाल कलकत्ता उच्च न्यायालय के जज बने। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय कानून में अधिकारिक शिक्षा प्राप्त की थी। जिसके कारण उन्हें इस ट्रिब्यूनल में सदस्य बनाया गया। ट्रिब्यूनल द्वारा जापानियों के विरुद्ध सुनाये गये इस अमानवीय निर्णय के विरोध में न्यायमूर्ति राधा विनोद पाल ने ''विरोध टिप्पणी'' लिखी थी। इस टिप्पणी में विनोद पाल ने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया था कि जापानी नेता युद्ध छेड़ने के लिए किसी भी तरह से अपराधी साबित नहीं होते और उन्हें दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। इसका प्रभाव यह हुआ कि अपराध की गंभीरता बहुत हद तक कम हुई है। इस एकमात्र विवेकी निणर्य के बदले जापान की जनता आज भी राधा विनोद पाल को सम्मान की नजरों से देखती है। टोकियों के यासूकूनी स्थान पर युद्ध अपराधी की याद में बनाए गए स्थल पर राधा विनोद पाल का स्मारक जापानियों ने आदर के साथ बनाया हुआ है। सिंजो एबे जब इस बार भारत आए तब वे राधा विनोद पाल के बेटे से मिलने कलकत्ता उनके निवास पर गए थे।

नया एशिया कहीं साम्राज्यवादी तो नहीं

भारत-जापान के बीच सहयोग की तुलना में भारत-चीन सहयोग एशिया एवं विश्व को नयी दिशा प्रदान कर सकता है।

■ डॉ. भरत झुनझुनवाला

जापान के प्रधान मंत्री सिन्जो एबे को भारत यात्रा के दौरान दिये गये विशेष सम्मान से स्पष्ट हो गया है कि भारत एवं जापान संयुक्त रूप से चीन के साम्राज्यवादी मंसूबों पर अंकुश लगाना चाहते हैं। परन्तु चीन अपने लम्बे इतिहास में अंतर्मुखी रहा है जबकि जापान ने दूसरे देशों पर कब्जा करने का लगातार प्रयास किया है। हमें सावधान रहना चाहिये । कहीं ऐसा न हो कि चीन के कथित साम्राज्यवादी चरित्र के नाम पर हम जापानी सम्राज्यवाद का अनजाने में समर्थन कर बैठें।

फन्क एण्ड वगनाल्स शब्दकोश के अनुसार चौथी सदी में जापान की रानी ने कोरिया पर आक्रमण करके कब्जा कर लिया था। सोलहवीं सदी के बाद से जापानी दस्युओं ने चीन के पूर्वी तट पर समुद्री जहाजों को लूटना चालू कर दिया था। अठारहवीं सदी के अंत में जापान ने र्‌यूकू द्वीप एवं कोरिया पर पुनः कब्जा कर लिया। 1931 में जापान ने मंचूरिया पर विजय हासिल की और पिछलग्गू शासन स्थापित किया। चीन ने इस मामले को लीग आफ नेशन्स में उठाया तो जापान ने वार्ता करने के स्थान पर लीग आफ नेशन्स से ही त्यागपत्र दे दिया। द्वितीय विश्व युद्ध में जापान ने जर्मनी और इटली के साथ गठबन्धन बनाया और चीन पर आक्रमण किया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जापान ने अमरीका से गहरा सम्बन्ध स्थापित किया है और अमरीका के कनिष्ठ पार्टनर के रूप में कोरिया, वियतनाम, अफगानिस्तान एवं इराक के युद्धों में या तो सक्रिय सहयोग दिया है अथवा मूक सहमति प्रदान की है। वियतनाम युद्ध विशेषकर उल्लेखनीय है। उत्तरी वियतनाम का वियतनामी शासन दक्षिणी वियतनाम में फ्रांस तथा अमरीका की घुसपैठ का विरोध कर रहा था। जापान के नजदीक ही हो रहे इस युद्ध में जापान मूक दर्शक होकर खड़ा रहा और इसी अवधि में अमरीका के साथ व्यापार आदि के सम्बन्धों को गहरा बनाता रहा। दक्षिणी अफ्रीका, नामीबिया, फीजी, यूगोस्लाविया आदि में भी जापान ने सार्थक भूमिका का निर्वाह नहीं किया है। वर्तमान युग में जापानी कम्पनियां पूरे विश्व के बाजार पर कब्जा करके लाभांश को स्वदेश भेजने में लगी हुयी है, जैसे सुजुकी को अधिकतर लाभ भारत से प्राप्त हो रहे हैं। यह आधुनिक साम्राज्यवाद है जिससे दूसरे देशों के घरेलू उद्योगों को नष्ट करके उनके स्वतन्त्र विकास को बाधित किया जाता है और उन्हें आर्थिक गुलामी में बांधा जाता है, बिल्कुल उसी तरह जैसे अंग्रजों ने भारत के साधनों को चूसा था।

चीन का इतिहास तुलना में भिन्न रहा है। चीन की मुख्य समस्या अपनी लम्बी सरहद को सुरक्षित रखना रहा है। लगभग 2,000 वर्ष पूर्व चीन राजघराने ने 'ग्रेट वाल' का निर्माण किया था जिससे आदिवासी घुसपैठियों को प्रवेश एवं लूट करने से रोका जा सके। छठी सदी में तुंग राजाओं ने देश की सुरक्षा का भार गैर चीनी कमांडरों को सौंप कर शान्ति हासिल की थी। दसवीं सदी में सुंग राजघरानों ने उत्तरी क्षेत्र में आदिवासियों को वार्षिक मुआवजा देकर शान्ति स्थापित की। तेरहवीं सदी में मंगोल राजा चंगेज़ खां ने बीजिंग पर कब्जा कर लिया। द्वितीय विश्व युद्ध में चीन को चारों तरफ से घेर लिया गया था – वियतनाम में फ्रांस, बर्मा में इंगलैंड, मंचूरिया में रूस एवं कोरिया में जापान द्वारा इस विश्व युद्ध में चीन ने न तो इंग्लैण्ड का साथ दिया न ही जर्मनी का। 70 के दशक में चीन ने उत्तरी वियतनाम को सैन्य सहायता देकर अमरीकी एवं फ्रांसिसी सेनाओं से लड़ने में मदद की थी जिससे चीन की कमजोर देशों के प्रति सौहार्द की झलक मिलती है।

चीन द्वारा तिब्बत पर कब्जा करना इस अंतर्मुखिता के विपरीत दिखता है। परन्तु वस्तु स्थिति भिन्न दिखती है।

प्रधान मंत्री एबे ने संसद को दिये अभिभाषण में कहा है '' एक नये एशिया का निर्माण हो रहा है जो अपनी भौगोलिक सीमाओं का उल्लंघन कर रहा है।'' प्रश्न है कि नए एशिया का स्वरूप क्या हेागा? भारत ने अपने पांच हजार वर्षों के इतिहास में चीन की तरह किसी दूसरे देश पर आक्रमण नहीं किया है फिर भी हमारी वैश्विक भूमिका प्रखर रही है।

तिब्बत स्वतंत्रता की हिमायती पत्रिका तिब्बत वायस द्वारा प्रकाशित पुस्तिका में बताया गया है कि सन् 1240 में मंगोल राजा गोडन खान ने तिब्बती लामा से बौद्ध धर्म की दीक्षा ली और लामा को तिब्बत का आधिपत्य दिया। आधिपत्य देने का अर्थ यह है कि यह क्षेत्र मंगोल साम्राज्य का हिस्सा था। 1653 में पांचवें दलाई लामा ने बीजिंग की यात्रा की और मांचू राजा भान्जी का धर्म गुरू बनना स्वीकार कर लिया। बदले में राजा ने तिब्बत को सुरक्षा देने का वायदा किया। सन् 1908 में चीन ने तिब्बत पर कब्जा कर लिया। उस समय ईंलैण्ड ने तिब्बत के शासकों को चीन के संकेतात्मक आधिपत्य को स्वीकार करने पर राजी कर लिया परन्तु चीन ने इसे स्वीकार नहीं किया। 1950 में पुनः चीन ने तिब्बत पर कब्जा कर लिया। 1951 में तिब्बती प्रतिनिधियों एवं चीन की सरकार के बीच समझौता हुआ जिसमें तिब्बत की आन्तरिक स्वायत्तता स्वीकार की गयी – यानि तिब्बत को चीन का स्वायत्त हिस्सा माना गया। इस इतिहास से झलक मिलती है कि इस लम्बे इतिहास में तिब्बती लोगों ने समय–समय पर चीन के आधिपत्य को स्वीकार किया है। यद्यपि पूरे मन से या स्वेच्छा से नहीं। अतः हमें चीन द्वारा तिब्बत पर आक्रमण से आन्दोलित नहीं होना चाहिये। यह सच है कि चीन ने तिब्बत में बौद्धों पर अत्याचार किये हैं परन्तु यह अलग विषय है। इससे चीन की आर्थिक एवं राजनीतिक अंतमुर्खी दृष्टि खारिज नहीं होती है।

चीन के विरूद्ध भारतीय आक्रोश का प्रमुख कारण 1962 का युद्ध है। इस विषय पर विद्वानों में एक मत नहीं है। नेविल मैक्सवेल ने स्थापित करने का प्रयास किया है कि वह युद्ध भारत द्वारा छेड़ा गया था। भारतीय सेना ने परम्परा से चीनी क्षेत्र में अपनी चौंकियां स्थापित करना शुरू किया था जिसके प्रतिरोध में चीन ने आक्रमण किया था। इस विषय पर अन्तिम निर्णय स्थगित करना ही उचित दिखता है। बहरहाल अपनी एक गलती को छुपाने के लिये दूसरी गलती नहीं करनी चाहिये। चीन की कम्पनियों ने जापानी कम्पनियों की तरह अपने तंतु दूसरे देशों में कम ही फैलाये हैं। पिछले कुछ वर्षों में चीन की कम्पनियां बहुराष्ट्रीय बनने की कोशिश कर रही हैं परन्तु ये जापान से बहुत पीछे हैं। डब्लूटीओ एवं संयुक्त राष्ट्र में भी चीन की भूमिका तटस्थ रही है। इस विवेचना से जापान और चीन के चरित्र की भिन्नता के संकेत मिलते हैं।

प्रधान मंत्री एबे ने संसद को दिये अभिभाषण में कहा है '' एक नये एशिया का निर्माण हो रहा है जो अपनी भौगोलिक सीमाओं का उल्लंघन कर रहा है।'' प्रश्न है कि नए एशिया का स्वरूप क्या हेागा? भारत ने अपने पांच हजार वर्षों के इतिहास में चीन की तरह किसी दूसरे देश पर आक्रमण नहीं किया है फिर भी हमारी वैश्विक भूमिका प्रखर रही है। कुछ विद्वानों का मत है कि वैदिक काल में पश्चिमी एशिया में भारत के लोग जाकर बस गये थे – इसीलिये उन शहरों के नाम हमारे शहरों के समान पाये जाते हैं। राम के दूत पूर्वी एशिया में बसे। बौद्ध भिक्षु तिब्बत, चीन और मंगोलिया में बस गये। हमने सदा दूसरे देशों को गले लगाया हैं। हम उनके हो गये हैं। हमने जापान की तरह दूसरे देशों पर कब्जा नहीं किया है न ही अमरीका की तरह दूसरे देशों के संसाधन निकाल कर स्वदेश लाये हैं। अतः हमें नये विश्व में एशिया की भूमिका स्पष्ट शब्दों में तय करनी होगी। जापान की माने तो नया एशिया दूसरे देशों पर आर्थिक कब्जा कर उनके संसाधनों को स्वदेश लायेगा। चीन एवं भारत की मानें तो नया एशिया विश्व को स्वतंत्र, स्वायत्त और सुखी देखना चाहेगा। अतः हमें सोच विचार कर अपने मित्र का चयन करना चाहिये। ❖

भारत–जापान व्यापार सम्बन्धी विवरण

भारत जापान के बीच व्यापार (2006)	6.5 बिलयन डॉलर
आगामी तीन वर्षों में व्यापार संभावना	20 बिलयन डॉलर
2012 तक भारत में जापानी निवेश की संभावना	5 बिलयन डॉलर
1991–2006 के बीच जापान से भारत में पूंजी निवेश	2.65 बिलयन डॉलर
भारत द्वारा 2005–06 में जापान से आयात	4.0 बिलयन डॉलर
भारत द्वारा जापान को 2005 – 06 में निर्यात	2.5 बिलयन डॉलर
2007–08 में जापान द्वारा भारत के विकास हेतु राशि	184.9 बिलयन येन
भारत में कार्यरत कुल जापानी कंपनियाँ	**500**

Advertisement

123 समझौते से ज्यादा खतरनाक है कृषि पर "भारत–अमरीकी ज्ञान पहल"

कृषि वैज्ञानिक एवं वैश्विक परिदृश्यों पर बारीक नजर रखने वाले भारत के प्रमुख कृषि वैज्ञानिक देवेन्द्र शर्मा का स्पष्ट मानना है कि भारत-अमरीकी ज्ञान पहल भारतीय कृषि को जड़ से समाप्त कर देगा और इस पर अवलंबित आबादी आने वाले दिनों में भयंकर संकट का सामना करेगी। दुर्भाग्यवश देश के लिए प्राण समान कृषि पर आए संकट पर बहस नहीं की जा रही है।

■ **देवेन्द्र शर्मा***

भारत–अमरीका परमाणु समझौते पर इस समय पूरे देश का ध्यान केन्द्रित है। भारत में इस पर तगड़ी बहस चल रही है। इसके हर पहलू को खंगाला जा रहा है कि कहीं इसका कोई प्रावधान भारत के सामरिक हित के विपरीत तो नहीं। वामदलों ने इस पर जितना बावेला मचाया है, उससे यूपीए गठबंधन सरकार तलवार की धार पर आ गयी है।

किसी भी लोकतंत्र के लिए यह एक स्वस्थ संकेत है। हमारे संविधान में ऐसी व्यवस्था नहीं कि कोई सरकार किसी दूसरे देश के साथ संधि करने से पहले संसद की मंजूरी अवश्य ले। इस समझौते पर वैज्ञानिकों और राजनीतिज्ञों के बीच व्यापक बहस होनी ही चाहिए, परन्तु जिन समझौतों में परमाणु शब्द नहीं आता उनमें हमारे राजनैतिक दल इतनी चिंता क्यों नहीं दिखाते?

ऐसे ही एक समझौते पर सबकी नजर जानी चाहिए थी, जो इस देश की जनता से ज्यादा संबंध रखता है। इसके अन्तर्गत देश के सामरिक हित अधिक दीर्घकालिक हैं और यह नवीनतम टेक्नोलॉजी पहुंच की पारंपरिक शर्त से भी कहीं दूर तक कारगर सिद्ध होगी। यह समझौता अमरीका के साथ ही है इसका नाम है – कृषि अनुसंधान, शिक्षा और विपणन में भारत–अमरीका ज्ञान पहल। मार्च 2006 में भारत यात्रा पर आए अमरीकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने हैदराबाद में इस पहल की औपचारिक शुरूआत की थी। यह अत्यंत महत्वपूर्ण समझौता है। यह देश की खाद्य सुरक्षा के साथ जुड़ा है, लेकिन किसी राजनैतिक दल ने इस पर तवज्जो नहीं दी। न ही कृषि क्षेत्र के प्रबुद्ध वैज्ञानिकों ने इसे खुर्दबीन के नीचे रखा। ऐसा लगाता है कि खाद्य सुरक्षा उतनी महत्वपूर्ण नहीं मानी गई।

भारत–अमरीका ज्ञान पहल की नींव 2005 में ही रख दी गई थी, जब डॉ. मनमोहन सिंह और जार्ज बुश ने कृषि टेक्नोलॉजी समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। अपनी अमरीका यात्रा पर अमरीकी संसद के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक को संबोधित करते हुए डॉ. मनमोहन सिंह ने कहा था कि भारत में हरित क्रांति ने लाखों लोगों को गरीबी से निजात दिलवाई। 'मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता हो रही है कि राष्ट्रपति बुश तथा मैंने कृषि क्षेत्र में भारत–अमरीका सहयोग का दुसरा चरण आरंभ करने का फैसला किया है। समझौते के बाद, भारत के कृषि वैज्ञानिकों का एक दल, इस कार्यक्रम पर अमल के तौर तरीके तय करने के लिए दिसम्बर 2005 में अमरीका गया था। अमरीका से भी कृषि वैज्ञानिक भारत यात्रा पर आए। पूरी कवायद बड़े गोपनीय ढंग से हुई। इस सिलसिले में ताजा आयोजन था, पांचवीं बोर्ड बैठक, जो जून 2007 में हुई। इस बैठक में भारत की ओर से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के महानिदेशक डॉ.

*लेखक : कृषि विशेषज्ञ हैं।

मंगला राय और अमरीका की तरफ से वहां के कृषि मंत्रालय में उप मंत्री एलेन टेरपस्ट्रा शामिल हुए।

कृषि क्षेत्र में भारत अमरीका ज्ञान पहल ऐसे समय शुरू हुई है, जब भारत की कृषि भयंकर संकट के दौर से गुजर रही है। इस पहल के तहत भारत के कृषि क्षेत्र के लिए टेक्नोलॉजी ट्रांसफर की व्यवस्था है, इसलिए यह भारत के लिए नितांत अहम है, लेकिन एक बात जिसका एहसास किसी को नहीं हो रहा कि जिस भारत की अस्सी फीसदी जनता लगभग सवा एकड़ जोत से जैसे–तैसे गुजर–बसर कर रही है, वहां इस नवीनतम अमरीकी टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल कैसे होगा। जबकि अमरीका और यूरोपीय देशों में एक गाय की खुराक ही पूरी मात्रा की पैदावार लगभग 10 एकड़ जमीन में होती है, लेकिन भारत में इतनी जमीन पर कम से कम 8 किसानों के परिवार पलते हैं।

जिस तथ्य की तरफ निगाह नहीं जा रही, वो यह है कि भारत के 60 करोड़ किसानों का लगभग 99 प्रतिशत (उनके परिवारों समेत) गरीबी की रेखा से नीचे रहता है। राष्ट्रीय असंगठित क्षेत्र उद्यम आयोग की ताजा रपट के अनुसार भारत की 83 करोड़ 60 लाख आबादी (जिसमें ज्यादातर गिनती किसानों की है) घोर गरीबी की हालत में रहती है। ये लोग किसी भी स्थिति का आसानी से शिकार हो सकते हैं। इनकी प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति खपत बीस रुपये से भी कम है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो यह आधा डॉलर रोजाना से भी नीचे है। सवाल यह पूछा जाना चाहिए कि इन निरीह लोगों के लिए क्या अमरीका में कहीं किसी उचित टेक्नोलॉजी का विकास किया जा रहा है। एनएसएसओ ने हाल के एक सर्वे में कहा था कि अगर कोई विकल्प दिया जाए तो 42 प्रतिशत किसान खेती छोड़ने के लिए तैयार हैं। सरकार को सबसे पहले तो यह पता लगाना चाहिए था कि देश की खेती की इतनी दयनीय दशा के पीछे कारण क्या हैं। इसकी बहुत बड़ी वजह है किसानों पर ऐसी टेक्नोलॉजी थोपना जो न तो पर्यावरण के अनुकूल है और न ही किसान उससे वाकिफ हैं। इस सब को जाने–समझे बिना सरकार किसानों के लिए अब एक और दोषपूर्ण दूसरी हरित क्रांति के नुस्खे सुझा रही है। अगर आप बोर्ड की बैठकों के ब्यौरे पढ़ें तो एक बात साफ सामने आएगी कि छोटे और बहुत छोटे किसान इस पहल से नदारद हैं। यह भारत–अमरीका समझौता मुख्यतौर पर खेती के निगमीकरण के बारे में है, इससे भारत की खेती बड़े अमरीकी घरानों के सीधे नियंत्रण में आ जाएगी। अमरीका के बड़े कृषि व्यापारिक निगमों का दबदबा इसी बात से स्पष्ट हो जाता है कि अमरीका की विशाल सुपरमार्किट कंपनी वॉलमार्ट तथा बीज तैयार करने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनी मोनसैंटो इस बोर्ड की सदस्य हैं। दिलचस्प बात यह भी है कि अभी इस समझौते की स्याही भी न सूखी थी कि खबरों से संकेत मिला कि वॉलमार्ट और मोनसैंटो ने साफ कहा कि उनकी अनुसंधान और विकास में कोई रूचि नहीं। वे केवल भारत द्वारा प्रस्तुत व्यापार के बढ़ते अवसरों को देख रही हैं। इन कंपनियों की रूचि भारत को फसलों और मवेशियों के बारे में ऐसी टेक्नोलॉजी देने में है, जिसकी भारत को न तो जरूरत है और उसमें जोखिम भी है।

दूसरी हरित क्रांति का पूरा ताना–बाना अमरीकी कृषि व्यापार के हितों के इर्द–गिर्द बुना गया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियां (और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भी) जो नई टेकनोलॉजी देने का प्लान बना रही है वे इतनी अत्याधुनिक हैं कि बड़ी संख्या में किसान उसके फायदे नहीं उठा सकेंगे। हालांकि परिषद ने सार्वजनिक रूप से कहा है कि वह गुजारे लायक खेती से आगे ठेका–खेती की तरफ बढ़ रही है, पर हकीकत यह है कि खेती से गुजारा चलाने वाली बात निकाल लेने की जो भारी सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक कीमत चुकानी पड़ेगी इस पर देश में कोई कारगर बहस हुई ही नहीं है। वक्त आ गया है कि इस समझौते पर भी पूरी राजनीतिक ताकत के साथ ध्यान दिया जाए। ❖

''आजीवन उपलब्धि सम्मान''

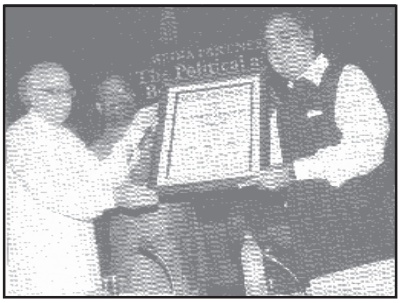

प्रमुख उद्योगपति एवं भारतीय विपणन विकास केन्द्र के अध्यक्ष श्री रवि विग को ''आजीवन उपलब्धि सम्मान'' से सम्मानित किया गया है। श्री रवि विग एम.ई.एस. बिल्डर्स एसोसियन एवं पी.ए.डी.सी.सी.आई. के पूर्व अध्यक्ष भी रह चुके हैं। आजादी के बाद से ही देश में जब औद्योगिकरण की शुरूआत हुई उसी समय से विग परिवार देश में औद्योगिक विकास की संस्कृति विकसित करने में लगा हुआ है। श्री रवि विग भी उसी परिवार की अगली कड़ी हैं। ''आजीवन उपलिब्ध सम्मान'' उन्हें निर्माण क्षेत्र में दिए गए सहयोग के लिए दिया गया है। लोकसभा में प्रतिपक्ष के भारतीय जनता पार्टी के नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी ने उनको यह सम्मान प्रदान किया। श्री रवि विग देश के भवन निर्माण क्षेत्र में वर्षों से लगे हुए हैं और हमेशा इस क्षेत्र से जुड़े बिल्डरों एवं श्रमिकों की समस्याओं को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रमुखता से उठाते रहे हैं। दिल्ली में एम.ई.एस. बिल्डर एसोसिएशन द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम में केन्द्रीय श्रम मंत्री श्री ऑस्कर फर्नाडीज एवं अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति एवं ख्यातिप्राप्त विशेषज्ञ भी उपस्थित थे।

संवाद ही एक मार्ग

(रूस के सेंट पीट्सबर्ग विश्वविद्यालय के मानव एवं समाज विज्ञान विभाग द्वारा दिनांक 24-25 मई 2007 को 7वें अंतराष्ट्रीय लिखाचेव विज्ञान सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन में भारत के पूर्व केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी ने सारगर्भित भाषण दिया। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी न्यास ने इसे प्रकाशित किया है। पाठकों के लिए प्रस्तुत है उस भाषण का हिंदी संस्करण - सं.)

■ **डॉ. मुरली मनोहर जोशी**

सभ्यता और संस्कृति के बीच बढ़ता टकराव आज की वैश्विक परिस्थिति में प्रमुख मुद्दे के रूप में स्थापित हो चुकी है। यह टकराव इस बात के लिए है कि विश्व में जो वैश्वीकरण का वातावरण विस्तार पा गया है, उसे पीछे नहीं मोड़ा जा सकता है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया तो बढ़ती गई है; फिर भी वैश्विक जागरूकता ने मानवता पर कब्जा नहीं होने दिया है और मानव–एकता के आदर्श बहुत हद तक भविष्य की शक्तियों के निर्धारक बनने संकेत देने लगे हैं। वैज्ञानिक खोजों के कारण हमारा ग्रह आज इतना लघु बन कर रह गया है कि सभ्यता और संस्कृति का विकास अलग–थलग रहकर संभव ही नहीं है। साथ ही सभ्यता तथा संस्कृति के कोण तथा इसकी तेज धार अब खुलेआम एक दूसरे से टकराती रहती है। आज समय की मांग है कि इस टकराव का समाधान एक नए ढंग से किया जाए। इसी प्रसंग में संवाद के ढंग को स्वीकार किया जाना चाहिए और इसे अंतिम परिणति तक पहुंचना चाहिए, वरना यह टकराव खतरनाक बन जाएगा। यहाँ तक कि यह घातक सिद्ध हो सकता है। इसलिए मानव जाति को एक दूसरे से ज्ञान की कला एवं विज्ञान सीखना चाहिए। इस प्रक्रिया में हमें बहुत ही सावधान रहना पड़ेगा कि हमें अपवर्जित की प्रवृत्ति और एकरूपता की प्रवृत्ति पर विजय पानी होगी, क्योंकि ये दोनों विविधता के लिए असहिष्णु हैं।

यह प्रश्न पूछा जाना बहुत महत्व रखता है कि सभ्यता क्या है? सामान्य भाव से सभ्यता का अभिप्राय एक ऐसे सभ्य समाज से रहता है, जो ज्ञान और उसके साधित्रों से अभिशासित, संगठित, शिक्षित और भण्डार से युक्त हो। यह एक ऐसे समाज की विकसित स्थिति होती है, जो जीवन के हर पहलू पर ज्ञान का विस्तार करने की कोशिश करती है और संस्कृति से हम सामान्यतया समाज की पूरी जीवन शैली, उसके मूल्यों, व्यवहारों को समझते हैं और किस प्रकार से यह न केवल समाज के सदस्यों के आपसी सम्बन्धों को परिभाषित करती है, बल्कि वातावरण का भी दिग्दर्शन करती है। समाज के मूल्यों की परिभाषा में धर्म की अहम भूमिका रहती है। सभ्यता और संस्कृति एक ऐसे सार्थक स्वरूप में हमारे सामने आती है जिनसे पूरी तरह से हमारा मस्तिष्क बदल जाता है और इसी से हम यथार्थ को देखते एवं अनुभव करते हैं तथा एक दूसरे के साथ संवाद करते हैं। ओरलैण्डो पेटर्सन ने संस्कृति मॉडल के बारे में कहा है कि यह 'बायोलाजिक स्टेम सैल' का सामाजिक मॉडल होता है। इस प्रकार मानव–व्यवहार और समाज की प्रगति को मूर्त रूप देने में संस्कृति की प्रमुख भूमिका रहती है जो व्यक्तियों तथा सामुहिकताओं के सम्बन्धों को स्पष्ट करती है।

और संवाद है क्या? संवाद इस बात को स्वीकार करता है कि व्यक्तियों में सुनने की और सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता होती है। ऐसे दृष्टिकोण को लेकर हम किसी भी अन्य मत रखने वाले व्यक्ति के दृष्टिकोण के साथ बिना अपने दृष्टिकोण में बदलाव लाए बिना सामंजस्य बिठा सकते हैं। संवाद में कुछ जोखिम, नैतिक जोखिम बना रहता है, परन्तु यह जोखिम उठाने लायक है।

बीसवीं शताब्दी का युग टकरावों से भरा पड़ा है और मानव जाति ने दो रक्तरंजित युद्ध देखे हैं और उनका कष्ट भोगना पड़ा है। पहला विश्व युद्ध समाप्ति की दृष्टि से लड़ा गया था, परन्तु ऐसा हुआ नहीं। दूसरे विश्व युद्ध के गर्भ से 'शीत युद्ध' का जन्म हुआ और तीव्र वैचारिक टकराव के युग का सूत्रपात हुआ। आज विश्व पहले से भी कहीं अधिक विभाजित हो गया है; अब हमारे सामने तीन विश्व खड़े हैं जिनमें खतरनाक टकराव देखने में आ रहे हैं।

यह भी कहा गया है कि 'शीत युद्ध' में हमें नई तकनीकी–आर्थिक विश्व व्यवस्था देखने को मिलेगी जिससे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति से प्रमुख टकराव समाप्त हो जाएंगे। फ्रांसिस फुकुयामा ने

निरन्तर भय में रहना और निरन्तर भय में लोगों को रहने देना सभ्यता की नृशंस हार है; और इस कारण राजनीति, नैतिकता और संस्कृति के सभी नेताओं को जागना होगा कि वे ऐसा वातावरण पैदा करें जिससे सभ्यता तथा संस्कृति के लक्ष्यों को विजयपथ पर लाया जा सके। और भी बहुत कुछ किए जाने की जरूरत है, संवाद को और अधिक कारगर बनाने की आवश्यकता है।

अपने 'एंड आफ हिस्ट्री' (इतिहास का अंत) शोध ग्रंथ प्रस्तुत किया और तर्क दिया कि 'शीत युद्ध' की समाप्ति से विचारों का युद्ध समाप्त होने के संकेत मिलते हैं और पश्चिमी, उदारवादी लोकतंत्र के उदय के संकेत भी मिलते हैं, जिससे वैश्विक सरकारें बनाई जाएंगी। यह भी तर्क दिया कि एक–ध्रुवीय विश्व की प्रतिस्पर्धात्मक शक्तियां सहकारी भागीदारी के रूप में बदल कर सामने आएंगी। क्या ऐसा हो पाया? अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की बढ़ोत्तरी के बाद भी टकराव और तनाव दूर नहीं हुए। बल्कि उनमें वृद्धि हुई है।

संस्कृति और सभ्यता के टकराव के विभिन्न पहलू हैं, जिनमें से आर्थिक तथा सामाजिक–राजनीतिक पहलुओं की गहन छाया रहती है और वे मानव–जीवन को बड़े क्षोभकारी ढंग से दुष्प्रभावित करते हैं। सबसे पहले तो पुराने विचार तथा विस्तारवाद का दर्शन है, जिसने वैश्वीकरण का लाभ उठाकर स्वेच्छाचारित एवं प्रतिस्पर्धात्मक आर्थिक लाभों के लिए अवसरों से लाभ उठाया है। आज जब हमें वैश्विक जागरूकता पैदा करने की जरूरत है, हम वैश्विक बाजार तथा आर्थिक तथा राजनीतिक गुटों के प्रमुख निर्माण में लगे हुए हैं। जबकि आज जरूरत है कि हम ऐसी पोषणीय अर्थव्यवस्था का विकास करें जिससे विश्व की अविकसित तथा विकसित देशों में समानता आए और असंतुलित विश्व में संतुलन पैदा हो, परन्तु हो यह रहा है कि उपभोक्तावाद के दर्शन का विकास किया जा रहा है। परन्तु सबसे अधिक दुखदायी बात यह है कि विश्व हिंसा के दर्शन को अनुचित दबाव में आकर विस्तारवादी और अपवर्जन की तरफ बढ़ता जा रहा है। अनजाने में ही विश्व में वैश्विक आतंक का वातावरण फैला दिया गया है। इससे विश्व के सभी देश, और विशेष रूप से इन देशों में निर्दोष निवासी लाचार दर्शक बनकर रह गए हैं, जिन्हें सदैव भय और निरन्तर खतरों में रह कर जीना पड़ रहा है। यदि आधुनिक संचार तथा परिवहन एवं टेक्नालॉजी के साधन गुरिल्ला युद्ध करने वाले लोगों को उपलब्ध करा दिए जाएं तो सभ्यता तथा संस्कृति की जड़ें ही हिल जाएंगी। निरन्तर भय में रहना और निरन्तर भय में लोगों को रहने देना सभ्यता की नृशंस हार है; और इस कारण राजनीति, नैतिकता और संस्कृति के सभी नेताओं को जागना होगा कि वे ऐसा वातावरण पैदा करें जिससे सभ्यता तथा संस्कृति के लक्ष्यों को विजयपथ पर लाया जा सके। वास्तव में, संस्कृति तथा सभ्यता का संवाद अभियान हिंसा के दर्शन का सही जवाब बन सकता है, परन्तु अभी तो इसकी शुरूआत ही हुई है, फिर भी यह अत्यंत स्वागत योग्य कदम है। और भी बहुत कुछ किए जाने की जरूरत है, संवाद को और अधिक कारगर बनाने की आवश्यकता है।

समय आ गया है कि अभी तक जो संवाद हुआ है, उससे कहीं अधिक इस पर विश्लेषणात्मक तथा संश्लेषणात्मक विवेचन किया जाए। इसलिए हमें तीन समस्याओं के समाधान पर ध्यान देना होगा। प्रथम, व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप एवं उनके सामंजस्य रूप में सत्यता की समस्या; द्वितीय, शासन की विभिन्न विधियों एवं प्रकारों तथा उनके सामंजस्य रूप में सत्यता की समस्या, और तृतीय, सजातीयता, संकल्पशक्ति, स्नेहभाव तथा सामंजस्य रूप में सत्यता की समस्या। किन्तु इस समय हमें संवाद में एक और अधिक गहन चिंता दिखाई पड़ रही है जिस पर पूरी मानवता को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है और वह यह है कि किसी प्रकार से हम ज्ञान के उच्चतम शिखर तक पहुंचें और अपने कार्य के लिए अच्छे से अच्छे साधन अपनाएं जिससे सम्पूर्ण मानव जगत का अधिक से अधिक हित कर सकें।

इस संबंध में हमें और भी गहराई में जाना होगा और हमें धर्म की भूमिका पर भी ध्यान देना होगा जिसने आचरण के प्रतिद्वंद्वात्मक स्तरों के बावजूद विज्ञान तथा दर्शन के बीच तथा कला एवं शिल्प के ग्रंथों में सृजन और आनन्द के बीच सामंजस्य पैदा करने की कोशिश की है। फिर भी स्वयं धर्मों के बीच ही जो टकराव पाया जाता है, वह अत्यंत कठिन टकराव है क्योंकि हर धर्म अपने ही ढंग से कार्य करता है और ऐसा लगता है कि सभ्यता तथा संस्कृति के बीच का टकराव और भी गहरा बनता जा रहा है। हमें इस समस्या का समाधान केंद्रीय समस्या के रूप में करना होगा।

हाल के दिनों में कई अध्ययन हुए हैं, जिनमें धार्मिक टकरावों के बीच समाधान करने का लक्ष्य रखा गया है। हाल ही में कोटिघंम की प्रकाशित एक पुस्तक 'दि स्प्रिचुअल डाइमेंशन' में लेखक का कहना है कि हमें धर्मों के टकराव की समस्या का समाधान उन धर्मों के बीच उनकी तुलना और विभिन्नताओं को दिखाकर और धार्मिक आस्थाओं की विभिन्न विधियों में तालमेल बिठाकर नहीं कर पाएंगे, जो उनकी संस्कृति में विद्यमान ही नहीं हैं। उन्होंने इन धर्मों के सिद्धांतों की बजाय आचरण पर बल देने की बात कही है, और इस ओर संकेत किया है कि धर्म के

आचरण से हमारी आन्तरिक चेतना बढ़ती है जिससे व्यक्ति की आत्मा धर्म से जुड़ जाती है। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि कोटिंघम धर्म और आध्यात्मिकता के भारतीय अनुभवों के प्रसंग में धर्म के द्वैतवाद के समाधान को बहुत नजदीक मानते हैं। भारत में जिस बात का अत्यंत महत्त्व रहा है, वह यह है कि यहां धर्म–तत्व ज्ञान की अपेक्षा भाव प्रमुख रहा है।

भारतीय चिंतक स्वीकार करते हैं कि धर्म के मूल की गहराई बौद्धिक प्रतिपादन, रातिरिवाज और समारोहों को पार कर जाती है। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि धर्म का उच्चतम उद्देश्य उस सच्चाई को प्राप्त करना है जो ईश्वर से है और इसकी प्रकृति बहुआयामी है और इसलिए इसे विभिन्न द्वारों एवं विभिन्न प्रकार के बौद्धिक प्रतिपादनों द्वारा अनुभव किया जा सकता हैं। इस दृष्टिकोण में विविधता को न केवल स्वीकार किया जाता है और उदारता से अपनाया जाता है बल्कि इसका मार्ग और भी आगे तक चला जाता है, ताकि हम विविधता का अनुष्ठान करते हुए घोषित करें कि विविधता जीवन की अभिव्यक्ति है। भारत में धर्मों के बीच सामंजस्य की प्रक्रिया आध्यात्मिक रूप से होती है जो कहती है कि कोई भी धर्म सच्चा या झूठा नहीं होता है। बल्कि सभी धर्म अपने ढंग से और अपनी परिभाषा में सच्चे होते हैं।

परन्तु इससे भी बढ़कर भारतीय अनुभवों ने आध्यात्मिक आचरण को बढ़ावा दिया है। परिणामतः हमें भारतीय धर्म में विभिन्न प्रकार के मत तथा विभिन्न जातियों का विकास देखने को मिलेगा और इस बात पर आम–सहमति साथ–साथ रहती है कि आध्यात्मिक मान्यता और आध्यात्मिक आचरण एक ही बात है। अशोक ने गिरनार के फरमान में कहा कि ''सामंजस्य या समरसता सही प्रवृत्ति है।'' सहिष्णुता तथा संवाद इस विचारधारा के मूल अंश हैं। भारत को एक

भारत में धर्मों के बीच सामंजस्य की प्रक्रिया आध्यात्मिक रूप से होती है जो कहती है कि कोई भी धर्म सच्चा या झूठा नहीं होता है। बल्कि सभी धर्म अपने ढंग से और अपनी परिभाषा में सच्चे होते हैं। परन्तु इससे भी बढ़कर भारतीय अनुभवों ने आध्यात्मिक आचरण को बढ़ावा दिया है। परिणामतः हमें भारतीय धर्म में विभिन्न प्रकार के मत तथा विभिन्न जातियों का विकास देखने को मिलेगा और इस बात पर आम–सहमति साथ–साथ रहती है कि आध्यात्मिक मान्यता और आध्यात्मिक आचरण एक ही बात है।

ऐसे देश के रूप में व्याख्यायित किया है, जो आध्यात्मिक सह–अस्तित्व के अनुभव का प्रतीक है।

आज वैज्ञानिक तथा दार्शनिक बुद्धिवाद से नव जीवन का संचार होने की संभावना है; संभव है कि आज की पश्च–आधुनिकता इसे पार कर जाए, और बुद्धिवाद से रुढ़िवाद खत्म हो जाए जिसमें मानकर चला जाता है कि समझदार व्यक्ति में ही बुद्धि होती है परन्तु इस विकल्प से भी सभ्यता और संस्कृति के बीच टकराव के और गहरे मुद्दों का समाधान नहीं हो पाता है। इसलिए हमें तीसरे विकल्प की ओर देखना होगा और इस विकल्प से बहुत हद तक संवाद की प्रक्रिया में मदद मिल सकती है। इसका अभिप्राय यह होगा कि धर्म की खोज को अध्यात्मिकता की खोज की तरफ बढ़ना होगा, और विज्ञान द्वारा अपनाए जा रहे ज्ञान की खोज को ब्रह्म चेतना की खोज में परिवर्तित करना होगा जो अस्तित्व के सभी दायरों में पदार्थों – जीवन, अस्तित्व तथा आध्यात्मिकता सभी में विज्ञान की नवीनतम प्रवृतियों के अनुसार इधर–उधर घूमती दिखाई पड़ती है। इसलिए विज्ञान और आध्यात्मिकता की भावना में समरसता पैदा कर आज के विश्व की सभ्यता और संस्कृति के बीच संवाद द्वारा टकरावों का समाधान करना होगा और मानवता को स्थायी समरसता और एकता प्रदान कर उसकी गहरी नींव डालनी होगी।

दूसरी तरफ, आध्यात्मिकता के क्षेत्र में, ऐसी नई प्रवृत्तियां मौजूद हैं, जिससे माना गया है कि यह भौतिक विश्व हमारी शारीरिक इन्द्रियों द्वारा पैदा किया कोई भ्रम मात्र नहीं है, बल्कि यह ऐसी गतिशील वास्तविकता है, जिसमें हमें आध्यात्मिक चेतना के कार्यों की झलक मिलती है। आज विज्ञान और आध्यात्मिकता तेजी से आगे बढ़ रहे हैं, जिसने कार्टेशियन मॉडल या न्यूटोनियम मॉडल को पहले ही पार कर लिया है, और पदार्थों तथा आध्यात्मिकता की एकता के बढ़ते प्रमाणों के साथ हम ऐसे बिन्दु पर पहुंच गए हैं जहां विज्ञान एवं आध्यात्मिकता के बीच का टकराव समाप्त हो जाता है। परिणामतः आज जो विभिन्न ग्रुपों में टकराव दिखाई पड़ता है, उसका समाधान अधिक सद्भावनापूर्वक और अधिक विश्वसनीय ढंग से किया जा सकता है।

एक वास्तविक सार्वभौमिक विश्व के लिए व्यापार और वाणिज्य, विज्ञान और टेक्नालॉजी, संस्कृति और सभ्यता तथा पर्यावरण सभी का सामंजस्य होना जरूरी है। भले ही हम इसे आदर्शवादी बात मानें, परन्तु यदि मानवजाति को जीवित रहना है तो हमारा यही लक्ष्य होना चाहिए। आशा है कि मानवता स्वयं को अवसर के अनुकूल ढालेगी और विज्ञान तथा आध्यात्मिकता के संश्लेषण का रास्ता अपनाकर सभ्यता एवं संस्कृति के टकरावों का समाधान करेगी और इस रास्ते पर चलने का केवल एक ही तरीका है : वह है संवाद का तरीका और विविधता में निहित एकता पर ध्यान देना। ❖

कहाँ है लोक कल्याणकारी राज्य?

आजादी के बाद जो एक राष्ट्र के रूप में आर्थिक मजबूती तो मिली लेकिन उसका लाभ एक सीमित वर्ग को ही मिल पाया है।

■ **निरंकार सिंह**

भारतीय गणराज्य के 60 वर्षों के बाद भी देश की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थिति की समीक्षा करते समय कोई बहुत आशाजनक चित्र नहीं उभरता है। हालांकि हमारा विदेशी मुद्रा भंडार तेजी से बढ़ रहा है और सेंसेक्स ने नये रिकार्ड बनाये हैं। लेकिन घाटी से कश्मीर मजदूरों का भगाया जाना और नक्सली हिंसा की घटनाएं हमारी राजनीतिक और प्रशासनिक व्यवस्था की शर्मनाक तस्वीर पेश करती हैं। असम में हिन्दीभाषी मजदूरों की बर्बर हत्या केन्द्र और राज्य सरकार के लिए खुली चुनौती है।

आजादी के इतने वर्षों बाद भी हमारे राजनेताओं के राज चलाने की क्षमताओं पर सवाल उठाये जा रहे हैं। एक राष्ट्र के रूप में पिछले कुछ सालों में आर्थिक सुधारों की बदौलत विकास दर बढ़ाने में कामयाबी जरूर मिली, लेकिन उसका लाभ अब तक एक सीमित वर्ग को मिला है और बहुसंख्यक समाज कसमसाता रह गया। इसलिए, असली चुनौती बहुसंख्यक समाज में खुशहाली पैदा करने की है। संप्रग सरकार इसे कब और कैसे कार्यरूप में बदलेगी, इसकी कोई संभावना नजर नहीं आती है। पिछले 15 सालों में कृषि और सिंचाई में सरकारी निवेश घटता गया। हमारी जीडीपी में कृषि का योगदान भले ही 25 प्रतिशत है, देश की कुल आबादी का 65 प्रतिशत हिस्सा खेती की आय पर ही आज भी निर्भर है। स्वयं सरकार ने माना है कि पिछले 15 सालों में लगभग एक लाख किसान कर्जजाल में फंसकर आत्महत्या कर चुके हैं। यह स्थिति कृषि क्षेत्र और किसानों की दुर्दशा का प्रतीक है। औद्योगिक विकास दर में लगातार बढ़ोत्तरी एक शुभ संकेत है लेकिन हम सबका पेट भरने वाले अन्नदेवता को नजरअंदाज नहीं कर सकते।

उद्योग, व्यापार, बैकिंग, बीमा आदि क्षेत्रों में आर्थिक सुधारों के जरिए भारत के विकास की गति को इधर एक नया बल मिला और भारत दुनिया में आज एक नई आर्थिक शक्ति बनने का सपना देख सकता है। लेकिन, गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता, बीमारी आदि के उन्मूलन में हमें अभी बहुत कुछ करना है। विकास सिर्फ आंकड़ों से नहीं होता। उसका अर्थ तभी है जब वह आम आदमी के जीवन में हर जगह परिलक्षित हो। मानवीय विकास के पैमाने पर दुनिया में भारत 127वें नम्बर पर अटका हुआ है। बिजली और पानी को लेकर जब पूरे देश में हाहाकार मचा हो तो हमें अपने विकास के पैमाने फिर से तय करने होंगे। आज भी लाखों गांवों तक बिजली नहीं पहुंची है और लाखों गांवों में पेयजल का संकट है। बिजली का संकट तो इतना गहरा है कि कोई राज्य ऐसा नहीं है जहां बिजली की कटौती नहीं हो रही हो। उद्योग धंधों को भी सुचारू रूप से भरोसेमंद बिजली की सप्लाई उपलब्ध नहीं है। ऐसी स्थिति में भारत विकसित देश कैसे बन सकता है। आज हमारी पूरी गणतांत्रिक व्यवस्था पर तंत्र हावी है। उदारवादी आर्थिक नीतियां तो लागू की गयीं लेकिन अभी तक हम अपनी नौकरशाही को उदार नहीं बना सके हैं। इसलिए विश्व बाजार की प्रतिस्पर्द्धा से हमारा देश पड़ोसी देशों से भी पिछड़ता जा रहा है।

देश में बेरोजगारों की संख्या बढ़ी है और इसका एक दुष्प्रभाव बढ़ते अपराधों के रूप में सामने आ रहा है। हरियाणा के भाटी माइंस में बंधुआ मजदूर हों या दिल्ली के यमुना पुश्ते पर घोर गरीबी में जीते लोग, महाराष्ट्र के विदर्भ में भीषण सूखा हो या बिहार में खेतीहर मजदूर, कालाहांडी में भुखमरी हो या देश के विभिन्न भागों में स्वास्थ्य व शिक्षा सुविधाओं का अभाव, ये सभी आम जनता की बदहाली जाहिर करते हैं। हालांकि आर्थिक विकास में

तेजी के कारण आबादी के प्रतिशत के रूप में गरीबी घटी है। 1970 के दशक में जहां देश की 50 फीसदी आबादी रेखा गरीबी के नीचे थी, वहीं अब वह प्रतिशत गिरकर 26 पहुंच गया है। लेकिन इन वर्षों के दौरान गरीबों की संख्या में इजाफा हुआ है। इसी का नतीजा है कि देश के 47 फीसदी बच्चे कुपोषण और 74 फीसदी रक्त की कमी के शिकार हैं। ग्रामीण इलाकों में 15–49 वर्ष आयुवर्ग की शादीशुदा महिलाओं में 36 को पूरा पोषण नहीं मिल पाता है। इसी आयुवर्ग की 54 फीसदी महिलाएं अशिक्षित हैं। इससे बड़े शर्म की बात ये है कि ग्रामीण इलाकों में 71 फीसदी घरों में शौचालय की सुविधा तक नहीं है, जबकि 51 फीसदी गावों में पानी की निकासी की कोई व्यवस्था नहीं है।

हमारी खाद्य सुरक्षा खतरे में है। खाद्यान्न की कमी के कारण देश में ऊंची कीमतों पर इसका आयात हुआ है। देश की जरूरत का आधा खाद्य तेल आज हम बाहर से मांगते हैं। 9 फीसदी दालों का भी आयात किया गया है और अब हम गेहूं का आयात कर रहे हैं। हमारे उद्योग धंधे मानों मौत की चट्टान पर खड़े हैं और एक–एक करके दम तोड़ रहे हैं। गांवों से शहरों की ओर भागते ग्रामीण, कम्पनी दर कम्पनी भटकते मजदूर, समाज की मुख्य धारा से कटे आदिवासी, जनजातियां, दलित, असहाय बच्चे और अमानवीय श्रम से लिप्त महिलाएं, छोटे उद्योग धंधे के मलबे पर मालामाल होती बहुराष्ट्रीय कम्पनियां हमारे आर्थिक विकास की असली तस्वीर पेश करती हैं। यह आर्थिक सुधार की नयी नीतियों को लागू किये जाने का नतीजा है जिसमें पूरी दुनिया एक बाजार बन गयी है। लेकिन इस बाजार में भारत की हिस्सेदारी लगातार घटती जा रही है। आजादी के पहले विश्व बाजार में भारत की भागीदारी तीन फीसदी के आसपास थी लेकिन वैश्वीकरण के इस युग में जबकि सारी दुनिया की सीमाएं

अचरज की बात तो यह है कि गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, गैर बराबरी, किसानों और बुनकरों की आत्महत्या के मामले अब हमारी राजनीति के भी मुख्य मुद्दे नहीं हैं। अब इन मामलों को विपक्षी दल संसद, विधान सभाओं या सड़क पर चर्चा का विषय नहीं बताते हैं। इसके लिए दलीय राजनीति से दूर जन आंदोलन करने वाले दूसरे संगठन खड़े हो रहे हैं।

व्यापार के लिए खोल दी गयी हैं हमारा योगदान घटकर एक फीसदी से कम हो गया है। दरअसल यह सब हमारी संसदीय राजनीतिक व्यवस्था के पतन का नतीजा है कि हमारे देश की आर्थिक नीतियां दूसरे देश तय कर रहे हैं। हमारी गिनती दुनिया के भ्रष्टतम देशों में होती है।

हमारी राजनीतिक व्यवस्था के पतन के ही कारण सभी प्रकार की लोक कल्याणकारी योजनाओं का भट्ठा बैठ गया है। बड़ी–बड़ी योजनाओं की घोषणा की जाती है लेकिन वे कभी जमीन पर लागू नहीं हो पाती हैं। इनका लाभ राजनेता, सरकारी अधिकारी, बैंकों के मैनेजर और बिचौलिये उठा रहे हैं। इसलिए तमाम विकास योजनाओं के बावजूद गरीबी और बेरोजगारी के मोर्चे पर हमारी स्थिति जस की तस है, बल्कि कई क्षेत्रों में तो और खराब हुई है। अचरज की बात तो यह है कि गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, गैर बराबरी, किसानों और बुनकरों की आत्महत्या के मामले अब हमारी राजनीति के भी मुख्य मुद्दे नहीं है। अब इन मामलों में विपक्षी दल संसद, विधान सभाओं या सड़क पर चर्चा का विषय नहीं बताते हैं। इसके लिए दलीय राजनीति से दूर जन आंदोलन करने वाले दूसरे संगठन खड़े हो रहे हैं। एक तरफ नक्सली है तो दूसरी ओर तमाम सामाजिक संगठन उभर रहे हैं।

देश में बढ़ रही आतंकवाद और नक्सली हिंसा की घटनाएं हमारी राष्ट्रीय सुरक्षा को चुनौतियां दे रही हैं। अक्षरधाम, लालकिले से लेकर संसद पर हमला हो चुका है। कश्मीर घाटी से पहले छोटे–बड़े गैर मुस्लिम कारोबारियों को भगाया गया, फिर कश्मीरी पंडितों को खदेड़ा गया अब गैर कश्मीरी मजदूरों पर गाज गिराई जा रही है। क्षेत्रवाद की यह समस्या कश्मीर घाटी में तो है ही असम में भी है जहां गैर असमियों के खिलाफ मुहिम जारी है। गैर असमियों की हत्याएं हो रही हैं, उनका अपहरण कर फिरौतियां वसूली जा रही हैं और उन्हें राज्य से पलायन को मजबूर किया जा रहा है। सबसे ज्यादा निशाने पर वहां बिहारी श्रमिक और मारवाड़ी सेठ हैं। पूर्वोतर के राज्यों नागालैंड और मिजोरम में जहां ईसाईयों का बोलबाला है, वहां भारत के किसी दूसरे राज्य से आया व्यक्ति न तो घर बना सकता है न मंदिर। जो लोग वहां रहते भी हैं वे अपमान और प्रताड़ना की जिंदगी जी रहे हैं। दीवाली जैसे त्योहार मनाने का भी वे साहस नहीं कर सकते हैं। महाराष्ट्र में शिवसेना उत्तर भारतीयों को भगाने के लिए झंडा उठाये फिर रही हैं। कुल मिलाकर हमारे राजनेताओं के राज चलाने की क्षमताओं पर सवाल उठने लगे हैं।

एक राष्ट्र के रूप में हमें सबके लिए शिक्षा सुनिश्चित करनी चाहिए। उन्हें रोजगार योग्य बनाना चाहिए और देशवासियों के लिए रोजगार पैदा करना चाहिए। हमें शीघ्रता से और लक्ष्य आधारित योजनाओं के अमल में अपना कौशल दिखाना चाहिए। स्पष्ट नीति और समयबद्ध योजनाओं के क्रियान्वयन से ही भारत को समृद्ध और खुशहाल राष्ट्र बना सकते हैं। ❖

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर एक प्रामाणिक पुस्तक

■ शांडिल्य

हाल ही में लेखक डॉ. परशुराम गुप्त द्वारा ''राष्ट्रीय सुरक्षा और सांस्कृतिक एकता'' नाम से एक पुस्तक छपकर बाजर में आयी है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर जब भी बहस होती है तो मोटे तौर पर एक दो प्रामाणिक उदाहरणों के अलावा भावनात्मक विषयों पर ज्यादा महत्त्व दिया जाता है। अधिकांश लोगों में तो यह धारणा है कि राष्ट्र के अस्तित्व की रक्षा सीमा पर सैनिक ही कर सकते हैं लेकिन यह अर्द्ध सत्य है। लेखक ने पुस्तक के शुरू में ही राष्ट्र के अन्तर्निहित शक्तियों के प्रमुख बिन्दुओं पर गंभीरता से प्रकाश डाला है। लेखक ने जिन बिन्दुओं को राष्ट्रशक्ति के कारक के रूप में रेखांकित किया है उनमें राष्ट्र का चरित्र, मनोबल, संस्कृति आदि को प्रमुखता से वर्णन किया गया है।

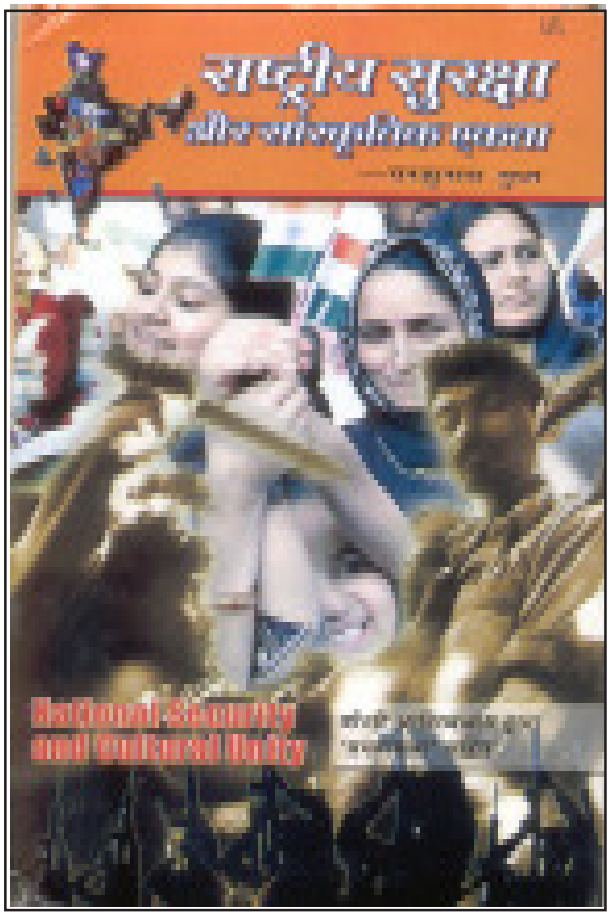

पुस्तक में कुल मिलाकर पन्द्रह अध्याय हैं और परिशिष्ट के रूप में दस खंड हैं। पन्द्रह अध्यायों में दो विषयों को प्रमुखता दी गई है। लेखक ने सांस्कृतिक एकता को राष्ट्रीय एकता के रूप में परिभाषित किया है वहीं दूसरे भाग में राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े विभिन्न बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। सभी अध्यायों की विशेषता यह है कि लेखक ने अपनी बातों को रखने के लिए प्रामाणिक तथ्यों का उपयोग किया है। इससे पुस्तक की विश्वसनीयता एवं पठनीयता दोनों बरकरार होती है।

महर्षि अरविंद द्वारा अपनी पत्नी को लिखे पत्र का उल्लेख करते हुए राष्ट्र की अवधारणा को बड़े अच्छे संदर्भ में बताया गया है। ''अन्य लोग स्वदेश को एक जड़ पदार्थ, कुछ मैदान, खेत, वन, पर्वत, नदी समझते हैं, मैं स्वदेश को माँ मानता हूँ तथा उसकी भक्ति करता हूँ, पूजा करता हूँ।'' इसी अध्याय में लेखक ने बड़ी मेहनत से विभिन्न धर्मों में प्रचलित मत–मतांतर का विस्तार से उल्लेख किया है। लेखक ने पुस्तक में बड़ी स्पष्टता से इस बात को स्थापित करने का प्रयास किया है कि भारत में राजनैतिक या जातीय आधार पर राष्ट्र की संकल्पना कभी नहीं की गई। अपितु संस्कृति जैसे स्थायी एवं टिकाऊ तत्वज्ञान के आधार पर राष्ट्रीयता को परिभाषित किया गया है और इसलिए सांस्कृतिक राष्ट्रवाद ही राष्ट्रीय एकता और अखंडता का मानक हो सकता है।

पुस्तक में बड़ी स्पष्टता से इस बात को स्थापित करने का प्रयास किया है कि भारत में राजनैतिक या जातीय आधार पर राष्ट्र की संकल्पना कभी नहीं की गई। अपितु संस्कृति जैसे स्थायी एवं टिकाऊ तत्वज्ञान के आधार पर राष्ट्रीयता को परिभाषित किया गया है

राष्ट्रीय एकता को पुष्ट करने वाले तत्वों में मेलाओं के योगदान की भी चर्चा है। पुस्तक में मेला के पीछे छिपी पौराणिक मान्यताओं के आधार पर यह स्पष्ट किया गया है कि सांस्कृतिक आग्रह के कारण ही लोग मेलाओं में जुटते रहे हैं। कुंभ, अर्ध कुंभ, विजयादशमी, दीपावली, होली, रामनवमी, गंगा स्नान एवं अन्य धर्म यांत्राएं पूरे देश में उत्साह से मनायी जाती है। इसी तरह प्रतीकों इतिहास जैसे अन्य बिन्दु भी राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने वाली कड़ी बताये गये है।

लेखक द्वारा राष्ट्रीय एकता एवं सुरक्षा के प्रति जो दृष्टिकोण अपनाया गया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। शायद इसका एक कारण यह रहा हो कि लेखक स्वयं

रक्षा अध्ययन के विशेषज्ञ हैं। इसलिए जब राष्ट्रीय सुरक्षा के विषय पर उनकी लेखनी चलती है तो वह सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं सामाजिक समस्याओं से उत्पन खतरों की ओर वो हमेशा इंगित करती हैं और वे राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए इन सांस्कृतिक टकरावों को प्रमुख कारण भी मानते हैं। साम्यवादी संगठनों, राजनेताओं एवं कट्टरपंथी संगठनों को कटघरे में खड़ा करते हुए पुस्तक में कहा गया है कि ये तत्व निश्चित रूप से राष्ट्रीय सूरक्षा के मार्ग में बाधक हैं। कश्मीर, पूर्वाचल, समान नागरिक संहिता, राष्ट्रभाषा एवं शिक्षा नीति आदि विषयों पर जितनी सूक्ष्म एवं तथ्यपरक व्याख्या की गई है वह इस पुस्तक को।

भविष्य में इस विषय पर शोध करने वाले शोधकर्ता के लिए आधार का काम करेगी। क्योंकि जो तथ्य एवं उद्धरण लिए गए हैं, वे केवल शास्त्रों और पुराणों से नहीं अपितु देश एवं विदेश के स्थापित और मानक स्रोतों से लिए गए हैं। पुस्तक पढ़ने वालों को समकालीन चुनौतियों से साक्षात्कार तो कराता ही है साथ ही समाधान के सूत्र भी प्रस्तुत करती है। भारत की सांस्कृतिक एकात्मता को सुदृढ़ करने के लिए जो बिन्दु दिये गए हैं। वे महत्व पूर्ण हैं।

सांस्कृतिक दृष्टिकोण से लिखी गई इस पुस्तक में इस्लामिक और क्रिश्चयन पंथों की कमजोरियों के विस्तार से उल्लेख है। पुस्तक के अंत में परिशिष्ट के रूप में जो भी संकलन दिए गए हैं। वह एक जगह अन्यत्र मिलना कठिन है। परिशिष्ट आठ में गृह मंत्रालय की रपट के अनुसार भारत में कार्यरत क्रिश्चियन संगठनों को विदेशों से धर्मान्तरण के लिए मिलने वाली धन राशि का तालिकाबद्ध उल्लेख है। पाठकों को भले ही कुछ मुद्दे भावनात्मक लगे लेकिन एक समग्र राष्ट्र की सुरक्षा एवं एकता की दृष्टि को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत पुस्तक में वर्णित लेख एवं संदर्भ काफी महत्वपूर्ण एवं विचारोत्तजक है। चूंकि पुस्तक विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की परियोजना के अन्तर्गत प्रकाशित की गई हैं इसलिए इसकी गुणवत्ता मसलन छपाई, कागज आदि बढ़ाई जा सकती थी। पुस्तक का मूल्य पुस्तक की उपयोगिता की तुलना में काफी कम है।

राष्ट्रीय सुरक्षा और सांस्कृतिक एकता
लेखक : परशुराम गुप्त
मूल्य रुपये मात्र 160/–
प्रकाशक – प्रकाश बुक डिपो

साहित्य अमृत का संग्रहणीय अंक "स्वाधीनता विशेषांक"

"साहित्य अमृत" मासिक पत्रिका हिन्दी साहित्य जगत में पिछले एक दशक से अधिक समय से सफलता के अनेक मापदंड स्थापित कर चुका है। हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य विद्वान एवं साहित्यकार विधानिवास मिश्र के संरक्षण में यह पत्रिका पल–बढ़ कर बड़ी हुई और समकालीन सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तनों को पहचानने की दृष्टि विकसित की। ऐसी मान्यता है कि साहित्य समाज का दर्पण है। समकालीन साहित्य जगत आज से 150 वर्ष पूर्व हुए देश में 1857 के स्वातंत्र्य समर की स्मृतियां मना रहा है। पूरे देश की संस्थाएं विभिन्न रूपों में इसे मनाने एवं पारिभाषित करने का प्रयास कर रही हैं। एसे समय पर साहित्य अमृत ने 1857 की समर गाथा को केंद्रित कर "स्वाधीनता विशेषांक" के अगस्त 07 का अंक निकाला है वह कई मायने में महत्त्वपूर्ण है। विशेषांक में बड़ी गंभीरता एवं मनोयोग से लेखों के चयन को महत्व दिया गया है जिससे विषय के आयाम को व्यापक विस्तार मिलता है। विशेषांक में लेखों की बहुतायत के बावजूद पुस्तकांश, आत्मकथा, पत्र एवं सस्मरणों के माध्यम से विषय के साथ न्याय करने की पूरी कोशिश की गई है। विधिवेत्ता एवं साहित्य कला प्रेमी नए संपादक डॉ. सिंधवी के सुझाव से एसा संभव हो सका होगा। लेकिन एक उल्लेखनीय कमी इस विशेषांक में दिखाई देती है। वह है आजादी के समय महर्षि अरविंद के योगदान का व्यापक वर्णन का अभाव झंडा गीत (विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, श्याम लाल गुप्ता पार्षद) का संग्रह उल्लेखनीय है। यह गीत यदा–कदा पढ़ने को ही मिलते हैं। इस विशेषांक का आलेख "प्रतिबंधित क्रांतिकारी साहित्य" (लेखक मदन लाल वर्मा 'क्रांत') एक शोध पर ऐसी ऐतिहासिक सामग्री है जिसका उपयोग आने वाले समय में हिन्दी साहित्य की दृष्टि से आजादी के आंदोलन पर शोध करने वाले छात्रों को लाभ पहुंचाने वाला साबित होगा। निश्चित रूप से यह एक संग्रहणीय एवं उपयोगी अंक है। (शांडिल्य)

दुनिया को भारत की जरूरत

आज का युवा भारत पूरी दुनिया में अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए पूरे दम खम के साथ खड़ा है, हमारे नीति निर्माताओं को यह समझना होगा।

■ डॉ. अश्विनी महाजन*

यह एक हकीकत है कि भारत दुनिया में चीन के बाद सबसे तेजी से आर्थिक समृद्धि करने वाला देश बन चुका है। यह भी हकीकत है कि भारत दुनिया में वैज्ञानिक दृष्टि से सबसे अधिक विकसित देश अमरीका को वैज्ञानिक उपलब्ध करा रहा है। दुनिया भर में आणविक शक्ति के रुप में भारत की गणना होती है। दुनिया में चिकित्सा, पर्यटन की दृष्टि से भारत दुनिया भर के लोगों के लिए सबसे प्रिय राष्ट्र बन चुका है। भारतीयों ने, जहां भी वो गये, अपने उद्यम, मेहनत और बुद्धि कौशल से अपनी एक विशेष जगह बनाई। दुनिया में सबसे अधिक बड़ी युवा शक्ति भारत के पास है।

सोवियत रुस के विघटन के बाद कुछ ऐसा लगने लगा था कि दुनिया पर अमरीका का एकछत्र राज हो गया है। लेकिन आज अमरीका की स्थिति लगातार बिगड़ रही है। इराक सहित दुनिया के कई देशों में अमरीका की बेवजह दखलंदाजी और उसके कारण अमरीका में बढ़ते बजटीय घाटे और लगातार बिगड़ती आर्थिक स्थिति के कारण आज अमरीकी डॉलर दुनिया की दूसरी करेंसियों के मुकाबले कमजोर होता जा रहा है। ऐसे समय में भारत में आर्थिक समृद्धि की दर बढ़ती जा रही है। निर्यात–विशेष तौर पर सेवाओं का निर्यात तेजी से बढ़ रहा है और यहीं नहीं भारतीय वैज्ञानिकों ने तथाकथित विकसित देशों में भी अपनी धाक जमा ली है।

लेकिन दुर्भाग्य है कि आज सरकार में बैठे लोग अभी भी गोरे लोगों को उत्तम समझने की मानसिकता से ग्रस्त हैं। वे अभी यह सोचते हैं कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, संस्थागत निवेशक और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बिना प्रगति संभव नहीं। यानि प्रगति तभी संभव है जब हम प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को अधिकतम कर सकें और देश का आर्थिक प्रबंधन बहुराष्ट्रीय कंपनियों को सौंप दें। इसके लिये उन्होंने विदेशी निवेश के लिये नियम ढीले कर दिये; बहुराष्ट्रीय कंपनियां जिनका भारतीयकरण हो चुका था, में फिर से विदेशी मालिकों को अपने अंश पूँजी बढ़ाने की अनुमति दे दी गई; प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिये और अधिक क्षेत्रों को खोल दिया गया और विदेशी संस्थागत निवेशकों को भारतीय शेयर और वस्तु बाजार में आधिपत्य स्थापित करने के लिये रास्ते खोल दिये गये। इसी सोच के चलते पिछले 15 वर्षों में विभिन्न दलों की सरकारों ने लगभग एक जैसी नीतियां अपनाईं। यही सोच गैर बराबरी वाले बहुपक्षीय व्यापार समझौतों पर हस्ताक्षर करने का भी सबब बनी।

इन सब के बावजूद भारतीय लोगों ने अपने कौशल, बुद्धि एवं उद्यम का जबरदस्त प्रदर्शन करते हुए दुनिया के मानचित्र पर भारत को एक शक्तिशाली देश के रुप में स्थापित किया और दुनिया को यह दिखाया कि हम अत्यंत कम समय में एक महाशक्ति बनने की ओर अग्रसर हैं।

तेज गति से बढ़ने वाला देश भारत

हाल ही में विश्व बैंक द्वारा प्रकाशित एक रपट में बताया गया है कि भारत अब दुनिया के सबसे तेज गति से बढ़ने वाले देशों में से एक हो गया है। आने वाले वर्षों में भारत न केवल अपनी आर्थिक समृद्धि की दर को जारी रख पाएगा बल्कि इसका सकल घरेलू उत्पाद आज के विकसित देशों से भी आगे बढ़ जाएगा। पिछले तीन वर्षों में भारत का सकल घरेलू उत्पाद डॉलरों में 16 प्रतिशत वार्षिक की दर से बढ़ रहा है (इसमें डॉलर के मुकाबले रुपये की मजबूती भी एक कारण है)। यदि आर्थिक समृद्धि की इस दर को बनाया रखा जा सका तो 2050 तक अमरीका के सकल घरेलू उत्पाद को भारत पार कर जाएगा। यहां इस बात से भ्रमित होने की जरूरत नहीं है कि भारत में आर्थिक

*लेखक : पीजीडीएवी महाविद्यालय दिल्ली में अर्थशास्त्र के उपाचार्य हैं।

पश्चिम के सभी देश आज मानवीय संसाधनों की कमी से ग्रसित हैं। न केवल मानवीय संसाधनों की संख्या घट रही है, बल्कि उसकी गुणवत्ता में भी लगातार गिरावट आ रही है। भविष्य में भी इसमें सुधार की कोई संभावना नहीं दिखाई देती। उदाहरण के लिए जर्मनी को लीजिए। जर्मनी यूरोप की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। जर्मनी के जनसंख्या विशेषज्ञों का मानना है कि सन् 2030 तक जर्मनी में कार्यशील जनसंख्या 70 लाख कम हो जाएगी।

समृद्धि के बढ़ने का कारण अमरीका, यूरोप और जापान से आने वाला पूँजी निवेश है। वास्तविकता यह है कि ये सब भारतीयों के कठिन परिश्रम और बुद्धि कौशल से ही संभव हुआ है। भारतीय अर्थव्यवस्था की यह मजबूती यदि अमरीका के कारण होती, तो अमरीका सबसे पहले अपनी अर्थव्यवस्था को मजबूत करता न कि हमारी। आज भारत लगभग 9 से 10 प्रतिशत वार्षिक की दर से आर्थिक समृद्धि कर रहा है, जबकि अमरीका और यूरोप के देश दो से तीन प्रतिशत की दर से ही प्रगति कर पा रहे हैं।

विश्व में घटते मानवीय संसाधन

पश्चिम के सभी देश आज मानवीय संसाधनों की कमी से ग्रसित हैं। न केवल मानवीय संसाधनों की संख्या घट रही है, बल्कि उसकी गुणवत्ता में भी लगातार गिरावट आ रही है। भविष्य में भी इसमें सुधार की कोई संभावना नहीं दिखाई देती। उदाहरण के लिए जर्मनी को लीजिए। जर्मनी यूरोप की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। जर्मनी के जनसंख्या विशेषज्ञों का मानना है कि सन् 2030 तक जर्मनी में कार्यशील जनसंख्या 70 लाख कम हो जाएगी।

अन्य देशों में जनसंख्या में यह कमी और तेजी से हो रही है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार इटली की जनसंख्या 575 लाख से घटकर 2050 तक मात्र 450 लाख रह जाएगी। इसी प्रकार हंगरी की जनसंख्या 100 लाख से घटकर 75 लाख, पोलैंड की 390 लाख से घटकर 330 लाख, जबकि रुस की जनसंख्या 14.50 करोड़ से घटकर मात्र 10 करोड़ रह जाएगी। जनसंख्या के लगातार घटने के कारण आज तीसरे विश्व विशेषकर एशिया से बड़े पैमाने पर जनसंख्या का स्थानांतरण हो रहा है। एक तरफ यूरोप की जनसंख्या की वृद्धि दर घट रही है और वहां रहने वाले बूढ़े हो रहे हैं। यूरोपीय समुदाय के सांख्यिकी विभाग के अनुसार 1975 और 1995 के बीच यूरोपीय समुदाय की जनसंख्या मात्र 6 प्रतिशत बढ़ी और 1995 से 2025 तक यह जनसंख्या मात्र 3.7 प्रतिशत ही बढ़ पाएगी। कुल मिलाकर यूरोपीय अर्थव्यवस्था अपने अवकाश प्राप्त जनसंख्या की सेवा में भारी समस्या अनुभव कर रही है। जनसंख्या स्थानांतरण ही यूरोप की श्रम समस्या और कल्याणकारी राज्य की समस्या के समाधान का एकमात्र उपाय माना जा रहा है।

यूरोप, अमरीका इत्यादि में जनसंख्या की प्रवृत्तियों के मद्देनजर बड़ी संख्या में भारतीय वहां जाकर बसे और आज उन देशों के विकास में एक अहम् भूमिका अदा कर रहे हैं। हालांकि यह कहा जा सकता है कि इसके कारण भारत से प्रतिभा पलायन हुआ, लेकिन साथ ही साथ ये भी सत्य है कि भारत और भारतीयों को दुनिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका में लाने में इस प्रवृत्ति का काफी सहयोग रहा। साथ ही साथ अंतरराष्ट्रीय संबंधों के अप्रत्यक्ष लाभ भी इस कारण हुए। आज अनिवासी भारतीयों द्वारा भेजी जा रही विदेशी मुद्रा के कारण हमारे व्यापार घाटे की भरपाई होती है और भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश भी काफी बड़ी मात्रा में भारतीय मूल के लोगों से प्राप्त होता है। जनसंख्या की वर्तमान प्रवृत्तियों के चलते स्थानांतरण की यह प्रवृत्ति और अधिक बढ़ेगी। आज भारतीय अमरीका, यूरोप और कनाडा की राजनीति में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं और भविष्य में इसमें और वृद्धि होगी।

भारत एक प्रौद्योगिकी महाशक्ति

जनवरी 2007 में भारत ने एक साथ चार उपग्रहों को अंतरिक्ष में स्थापित कर विश्व को चौंका दिया। मानव को अंतरिक्ष में भेजने की यह पहल मानी जा सकती है। इन चार उपग्रहों में से एक अर्जेंटीना और इंडोनेशिया का भी था। भारत 5000 किलोमीटर की दूरी पर मारक क्षमता रखने वाली मिसाईल बनाने की ओर अग्रसर है। अभी तक 2000 किलोमीटर की मारक क्षमता वाले अग्नि–2 का परीक्षण हम 1999 में ही कर चुके हैं। भारत सूचना प्रौद्योगिकी में एक महाशक्ति बन चुका है और हमारी स्थिति पहले से और अधिक मजबूत होती जा रही है। 2003–04 में हमारे सॉफ्टवेयर निर्यात 12.8 अरब डॉलर से बढ़कर 2005–06 में 22.5 अरब डॉलर तक पहुँच गये।

चिकित्सा क्षेत्र में बढ़ता आकर्षण

एक ओर तो भारतीय विदेशों में जाकर के बस रहे हैं तो दूसरी ओर विदेशी लोग अपने–अपने देशों में चिकित्सा की भारी लागत के चलते अपने इलाज के लिए भारत की ओर आकर्षित हो रहे हैं। आज भारत में बड़ी संख्या में विदेशी पर्यटक यहां अपने इलाज के लिए आ रहे हैं। इन पर्यटकों में अधिकतर लोग तथाकथित विकसित देशों जैसे अमरीका, इंग्लैंड इत्यादि से आते हैं। विकसित देशों में चिकित्सा की लागत निरंतर बढ़ रही है। भारत अपनी कम लागत की चिकित्सा व्यवस्था और अत्यंत कुशल डॉक्टरों के कारण चिकित्सा पर्यटकों को आकर्षित कर रहा है। भारत में चिकित्सा न केवल

जल्दी प्राप्त हो जाती है बल्कि बहुत सस्ती भी है। भारत में वार्षिक चिकित्सकीय चेकअप मात्र 150 डॉलर में हो जाता है जबकि अमरीका में इसकी लागत 1500 डॉलर आती है। आजकल इंटरनेट द्वारा भी चिकित्सकीय परामर्श प्रारंभ हुआ है जिसमें भारतीय डॉक्टरों की एक विशेष भूमिका है।

भूमंडलीकरण से ऐसा संभव हुआ है?

आज भारतीय अर्थव्यवस्था यदि दुनिया में सबसे तेज बढ़ने वाली अर्थव्यवस्थाओं में से एक है तो यह भूमंडलीकरण या विदेशी निवेश के कारण नहीं बल्कि उसके बावजूद है। यदि हम सकल घरेलू उत्पाद और उसकी समृद्धि के घटकों को देखें तो पाते हैं कि भूमंडलीकरण की इस आर्थिक संमृद्धि में कोई भूमिका नहीं है। बल्कि भूमंडलीकरण ने कृषि विकास में उल्टी भूमिका निभाई। विदेशी पूंजी के मोह के चलते कृषि में निवेश में अनदेखी हुई और यहां तक की सरकार द्वारा भी कृषि पर होने वाला खर्च घटा दिया गया। पहले जहां कृषि पर सरकारी बजट का 27 प्रतिशत खर्च होता था आज ये मात्र 6 प्रतिशत रह गया है। कृषि का सकल घरेलू उत्पाद में योगदान जहां 32 प्रतिशत था वह घटकर मात्र 18 प्रतिशत के आस–पास पहुँच गया। ऐसे क्षेत्र जहां अधिकतम समृद्धि दिखाई देती है वह है सेवा क्षेत्र। इस क्षेत्र में समृद्धि मुख्यतः सूचना प्रौद्योगिकी और बीपीओ क्षेत्र के कारण हुई है। भूमंडलीकरण को किसी भी हालत में इस संमृद्धि के लिए जिम्मेदार नहीं माना जा सकता। सच्चाई तो यह है कि सूचना प्रौद्योगिकी और बीपीओ क्षेत्र में समृद्धि विदेशियों द्वारा लागत घटाने की मजबूरी, भारतीयों के बुद्धि कौशल और तकनीकी प्रगति के कारण हुई। आज यदि भारत अंतरिक्ष के क्षेत्र में, चिकित्सा के क्षेत्र में अथवा सामरिक क्षेत्र में मजबूत हुआ है तो वह भूमंडलीकरण के कारण नहीं बल्कि भारतीय वैज्ञानिकों, डॉक्टरों, इंजीनयरों आदि के बुद्धि कौशल के कारण हुआ। आज भारत ने विभिन्न क्षेत्रों में स्थापित केन्द्रों को पीछे धकेलते हुए अपनी उत्तम सेवाओं एवं प्रतिस्पर्धी कीमतों के आधार पर शिखर पर अपना स्थान बनाया है। सच्चाई यह है कि चाहे अंतरिक्ष का क्षेत्र हो, आणविक विज्ञान हो अथवा कोई अन्य क्षेत्र, किसी भी देश ने हमें अपनी इच्छा से प्रौद्योगिकी उपलब्ध नहीं कराई। भारतीय वैज्ञानिकों के कौशल से ही भारत अपना यह स्थान बना सका है। आज हमें अंतरराष्ट्रीय महाशक्ति बनने से कोई रोक नहीं सकता। आवश्यकता है एक ठोस आत्मविश्वास की, लोगों को सभी स्तरों पर शिक्षा प्रदान करने, ढांचागत सुविधाओं के निर्माण की और सबसे ज्यादा एक सच्ची राष्ट्रवादी सोच की। हमारे नीति निर्माताओं को यह समझना होगा कि हमें दुनिया की कम बल्कि दुनिया को हमारी अधिक जरूरत है। ❖

'गोरहा खेती' से चमकेगी किसानों की तकदीर

कृषि श्रमिकों का अभाव किसानों के लिए बड़ी समस्या है। ऐसे में यदि बिना रोपनी और बिना बिहन किये खेती हो तो किसानों को लाभ ही लाभ है। ऊपर से यह भी कि खाद का खर्च व लागत भी कम। एक बिगहा धान की खेती पारंपरिक तरीके की अपेक्षा नयी तरह से करने पर एक हजार रुपये की सीधा बचत। वाकई किसानों को यह तरीका खास प्रभावित करेगा। 'खर्च कम, उपज ज्यादा' वाले इस तरीके को गोरहा खेती कहते हैं। बिहार के दाउदनगर अनुमंडल मुख्यालय से लगभग तेरह किमी की दूरी पर अरई पंचायत में एक गांव है नौडिहां। यहां के पचपन वर्षीय बीए शास्त्री पढ़े रामविनय शर्मा उर्फ भुज शर्मा बड़े किसान हैं और गोरहा खेती के आविष्कारक हैं। प्रायः 'जग हंसे या जवार' फर्क नहीं पड़ता है। बेटा गुस्साता है कि खेत बर्वाद कर रहे हैं लेकिन भुज शर्मा पर खेती के मामले में प्रयोग करने का भूत सवार है। पांच साल तक आजमाने के बाद इस वर्ष इनके चेहरे पर खुशी और बाजुओं में फड़क है क्योंकि उनका सपना 'गोरहा खेती' आज इलाके में उनका मान बढ़ा रहा है। लोग दूर–दूर से उनकी दो एकड़ खेती में लगी धान की फसल देखने आ रहे हैं। धान का डंठल इतना मोटा है कि उसमें कीटाणु प्रवेश नहीं कर सकता। गोरहा खेती के बारे में वे बताते हैं कि एक किलो धान का बीज 35 किलो गोबर में मिलाकर छोटा–छोटा गोरहा पाथकर सुखा दें। यह कार्य फाल्गुन चैत में करें ताकि नमी की वजह से नुकसान होने का तनिक भी खतरा न रहे। यह गोरहा एक बिगहा खेती के लिये पर्याप्त होगा। मौसम आने पर सूखे खेत की जुताई कर उसमें गोरहा डाल दें और हेगा दे दें। तुरंत पटवन कर दें, फिर कोई समस्या नहीं होने वाली। जब पौधा तीन इंच का हो जाये तब खेत पानी से भर दें। इस खेत की फसल काफी पौष्टिक होगी। धान का बाल दूसरों की अपेक्षा 2 इंच लंबा होगा तथा एक बिगहा में 50 मन की जगह 60 मन धान की उपज होगी।

उन्होंने बताया कि गोरहा खेती में खाद न के बराबर डालनी होती है, जबकि पारंपरिक खेती में डेढ़ किलो डीएपी, एक किलो यूरिया और ढाई सौ ग्राम पोटाश प्रति एक कट्टा डालना पड़ता है। इस तरह प्रति बिगहा खेती पर एक हजार रुपये की बचत होगी। जिस खेत में गेहूं एवं चना की खेती होती हो उस पर गोरहा धान खेती वास्ते पानी की मुश्किल नहीं होती। भुज शर्मा का दावा है कि बोरिंग वाले इलाके में इस तरह की खेती ज्यादा निरापद, सुविधाजनक और लाभदायक है। ऐसी खेती से किसानों की तकदीर चमकेगी। उन्होंने कहा कि किसान अधिकाधिक गोरहा खेती कर अपनी बचत बढ़ा सकते हैं और मजदूर समस्या से बच सकते हैं। अनुमंडल पदाधिकारी अशोक कुमार सिंह ने कहा कि वे प्रखंड कृषि पदाधिकारी को खेत देखने भेजेंगे और उसके बाद खुद भी छानबीन कर जिला कृषि पदाधिकारी की रिपोर्ट भेजेंगे ताकि सरकारी स्तर पर यथासंभव लाभ पहुंचाया जा सके।

स्वतंत्रता दिवस पर प्रधानमंत्री का भाषण

'गुड फॉर नथिंग'

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह का देश को संबोधित भाषण रस्म अदायगी साबित हुआ। भाषण में देश के सामने मौजूद चुनौतियों की जानबूझकर या अनजाने में अनदेखी की गयी।

■ **डॉ. सूर्यप्रकाश अग्रवाल**

15 अगस्त 2007 को भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने अपना चौथा भाषण लाल किले की प्राचीर से पढ़ा। भाषण कीं खास बात रही – 'कर सकते हैं, करना चाहिए'। उन्होंने राष्ट्रीय समस्याओं पर चुप्पी सी साध ली। क्या वे समस्याऐं हल हो चुकी हैं? जिन कार्यक्रमों को लागू करने का जिक्र किया गया उन्हें तो वे अपने बजट तथा अन्य मौकों पर संसद में अपनी किसी बहस में लागू कर सकते थे जबकि राष्ट्रीय समस्याओं जैसे आंतरिक व बाह्य सुरक्षा के बढ़ते खतरे, भ्रष्टाचार, बढ़ती हुई जनसंख्या, बढ़ती महँगाई, शेष विदेशी मुद्रा भंडार, ठप्प होती विकास योजनाऐं, देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का बढ़ता वर्चस्व, देश में बढती विदेशी घुसपैठ इत्यादि समस्याओं के बारे में कोई राष्ट्रीय नीति घोषित की जाती तो अच्छा होता। प्रधानमंत्री लाल किले की प्राचीर पर आये और अपना भाषण क्या शोध लेख पढ़कर चले गये। पहले राजीव गांधी जी कहा करते थे कि हमने देखा है, हम देखेंगे अब परिवर्तित वाक्य प्रधानमंत्री के मुख से ' कर सकते हैं, करना चाहिए' भारतीय नागरिक सुन रहा है। भाषण 'गुड फॉर नथिंग' प्रतीत होता था जो मात्र रस्म अदायगी भर था।

प्रधानमंत्री ने लाल किले की प्राचीर से अपने चौथे भाषण में कहा कि 65 वर्ष से अधिक आयु के गरीब बूढों को पैंशन व जीवन बीमा व दुर्घटना बीमा का लाभ मिलेगा, विश्वविद्यालय से लेकर स्कूल स्तर तक पढ़ाई और व्यायसायिक शिक्षा के विस्तार के लिए बड़ी योजना बनायी जायेंगी जिनमें 6,000 विकास खण्डों में एक–एक आदर्श स्कूल, 370 जिलों में एक नया कालेज और 30 नए केन्द्रीय विश्वविद्यालय खोले जायेंगे। राष्ट्रीय स्तर पर एक व्यावसायिक शिक्षा और दक्षता विकास मिशन शुरु होगा जिसमें 1,600 नये औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान, आई टी आई, पोलीटेक्नीक संस्थान, 10 हजार व्यावसायिक स्कूल तथा 50 हजार दक्षता विकास केन्द्र स्थापित होगें जिससे एक करोड़ युवाओं को प्रति वर्ष व्यावसायिक शिक्षा में दाखिला मिल सकेगा जो वर्तमान से चार गुना अधिक होगा तथा 20 प्रतिशत बच्चों को कालेज की पढाई की सुविधा मिल सकेगी। विज्ञान व तकनीकी की शिक्षा के विस्तार के लिए भी कदम उठाने का वायदा प्रधानमंत्री ने लाल किले की प्राचीर से किया। काम चलाऊ साक्षरता के स्थान पर आधुनिक शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्ति लाकर बेहतर शिक्षा लागू करने के लिए कदम उठाने की कोशिश की जायेगी तथा राज्य सरकारों को भी शिक्षा पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

उद्योगों के विकास पर ध्यान देकर खेती से विस्थापित होने वालों को पुर्नवास की व्यवस्था की जायेगी। औद्योगिक विकास के लिए अच्छी ढांचागत सुविधाऐं राज्य सरकारों को देनी चाहिए। देश में युवाओं की ताकत से देश को तरक्की के रास्ते पर ले जाया जा सकता है। कृषि आध ाारित देश को विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) के माध्यम से औद्योगिक आधारित देश में बदलने की कवायद की जाने की आवश्यकता है। ऐसी ही अनेक विकास से ओत प्रोत बातें व योजनाऐं प्रधानमंत्री ने अपने भाषण में कहीं। जिनमें सपने अधिक व हकीकत कम थी।

भाषण में आतंकवाद व अलगाववाद के बढ़ते खतरे, अलकायदा के बढते खतरों का उल्लेख नहीं किया गया। आजकल गर्मागर्म बहस के केन्द्र में रही हमारी परमाणु नीति जिसमें भारत–अमरीका परमाणु समझौता प्रमुख है का नाम भी नहीं लिया गया। देश में फलीभूत होते नक्सलवाद, आतंरिक व बाहरी खतरों,

माओवाद से जूझने की कोई रीतिनीति व किसी कार्य योजना का नाम नहीं था। कश्मीर में पाकिस्तान से व सम्पूर्ण देश में बांग्लादेश से बढ़ती घुसपैठ भी प्रधानमंत्री को चिन्तित नहीं कर रही है। देश में भ्रष्टाचार है ही नहीं, नहीं तो क्या प्रधानमंत्री भ्रष्टाचार का नाम अपने ऐतिहासिक भाषण में नहीं लेते? बढ़ती जनसंख्या को और बढाओ यह भी देश के लिए कोई चिन्ता की बात नहीं है? देश के आर्थिक विकास का लाभ समाज के प्रत्येक तबके तक किस प्रकार पंहुचाया जायेगा प्रधानमंत्री नहीं जानते हैं? अमीर व गरीब की खाई पटेगी या नहीं। वैश्वीकरण व उदारीकरण से अमीर और अमीर व गरीब और गरीब बन रहे हैं। उन नीतियों की भी समीक्षा करने की आवश्यकता है क्योंकि उन नीतियों को लागू हुए पन्द्रह वर्ष से अधिक हो चुके है। करोड़पति अब अरबपति से खरबपति तक बन चुके है। देश तरक्की कर रहा है। आम आदमी जो दाल रोटी की महँगाई से त्रस्त है तथा उसकी अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति की वस्तुओं के बढ़ते दाम भी हमारे अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री को तनिक भी विचलित नहीं कर पा रहे हैं। डॉ. मनमोहन सिंह भारत के आम आदमी से अभी भी दूरी बनाये हुए हैं उनकी यह प्रवृति उन्हें पं. जवाहर लाल नेहरु, लाल बहादुर शास्त्री, इंदिरा गांधी, अटल बिहारी वाजपेयी की श्रेणी में लाने से रोकती है। अभी भी वे सरकारी व निर्देशित बाबू अधिक व प्रधानमंत्री कम होने का अहसास भारत की आम जनता को कराते हैं। प्रधानमंत्री का भाषण एक शोध लेख जैसा था जो कि आम आदमी की समझ के परे था। उनका बोरिंग भाषण जो गुड फॉर नथिंग की कहावत चरितार्थ करता है उसमें मात्र सराहनीय है तो वह है उनकी बेबाक टिप्पणी कि काफी कुछ किया है और बहुत कुछ करना बाकी है। आप चाहो तो बच्चों की तरह प्रधानमंत्री के इस ऐतिहासिक भाषण पर ताली बजा सकते हो। ❖

भारत में अधिग्रहण और विलयन

भारतीय कम्पनियों के अधिग्रहण कार्यक्रम में ब्रिटेन महत्त्वपूर्ण केन्द्र के रूप में उभरकर सामने आया है। इसी संदर्भ में ब्रिटिश कम्पनियां भी बड़े पैमाने पर भारतीय कम्पनियों के अधिग्रहण हेतु भारत में प्रयास कर रही हैं। अब तक ब्रिटिश कम्पनियां भारतीय कम्पनियों के साथ 12.9 बिलियन डॉलर के अधिग्रहण सौदे सम्पन्न कर चुकी हैं, ब्रिटेन आने वाले वर्षों में भारतीय कंपनियों का सबसे बड़ा अधिग्रहणकर्ता राष्ट्र बन सकता है। इसी तरह भारतीय कम्पनियों के द्वारा किए जाने वाले विदेशी अधिग्रहणों में भी ब्रिटेन का महत्त्वपूर्ण स्थान रहेगा, ऐसी सम्भावना है। वैश्विक वित्तीय सलाहकार फर्म थॉर्नटन ने कहा है कि इस क्षेत्र में व्यापक अधिग्रहण की सम्भावनाएं मौजूद हैं। लेकिन ब्रिटिश कंपनियां पूरी तरह सफल नहीं हो पाई हैं। गत वर्ष की तुलना में ब्रिटिश कम्पनियों ने भारत में वर्तमान वर्ष के दौरान 41 गुना अधिक अधिग्रहण किए हैं गत वर्ष ब्रिटिश कम्पनियों ने कुल 310 मिलियन डॉलर के अधिग्रहण किए थे। भारत व ब्रिटेन में बहुत मजहबूत ऐतिहासिक सम्बन्ध रहे हैं, ब्रिटेन ने लम्बे समय तक भारत में राज किया है और भारत की कार्यप्रणाली से ब्रिटिश उद्यमी भली प्रकार अवगत भी हैं। भारत की अर्थव्यवस्था बहुत तेजी के साथ विकास कर रही है। इसके परिणामस्वरूप भी ब्रिटिश उद्यमियों का भारतीय बाजार व अर्थव्यवस्था के प्रति आकर्षण बढ़ गया है। ग्रान्ट थार्नटन के व्यावसायिक साझेदार अनुज चन्दे ने कहा है कि वर्ष 2007 के दौरान 14.5 बिलियन डॉलर मूल्य की 78 कम्पनियों का अधिग्रहण विदेशी निवेशकों द्वारा भारत में किया गया है।

इन सौदों में 190.9 बिलियन डॉलर का एक सौदा वोडाफोन का है जिसने एस्सार हचीसन का अधिग्रहण किया है। इस सौदे के अलावा ब्रिटेन की कम्पनियों ने तीन और अधिग्रहण भी किए हैं। वर्ष 2007 की प्रथम छमाही के दौरान भारतीय कम्पनियों ने 1.2 बिलियन डॉलर के ब्रिटिश कम्पनियों के अधिग्रहण किए हैं जबकि इस अवधि में अमरीकी कम्पनियों के अधिग्रहण पर 332 मिलियन डॉलर खर्च किए गए हैं। वर्ष 2006 के दौरान कुल 119 अन्तर्राष्ट्रीय अधिग्रहण भारतीय कम्पनियों के द्वारा किए गए हैं। वर्तमान वर्ष के दौरान भारतीय कम्पनियां 63 अधिग्रहण कर चुकी हैं, इनमें से समत अधिग्रहण ब्रिटेन में किए गए हैं, भारत के यूबी समूह ने एक बिलियन डॉलर की लागत से स्कॉच व्हिस्की बनाने वाली कम्पनी वायतेमेके का अधिग्रहण किया है। वर्ष 2007 के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय अधिग्रहण के कच्चे माल की महत्त्वपूर्ण हिस्सेदारी रही है, जबकि एस्सार के अधिग्रहण के मूल्य की महत्वपूर्ण हिस्सेदारी रही है। यूरोप की कम्पनियां आज भी भारत में अधिग्रहण के प्रति अधिक आक्रामक नहीं हैं। वर्ष 2006 के दौरान ब्रिटेन की कम्पनियों ने 17 अधिग्रहण किए थे जबकि फ्रांस की कम्पनियों ने कुल सात अधिग्रहण किए थे। ब्रिटेन की कम्पनियां अपने मजबूत सांस्कृतिक व ऐतिहासिक सम्बन्धों के कारण तेज गति से भारत में अधिग्रहण करने में सफल हुई हैं। थार्नटन ने कहा है कि जो कोई कम्पनी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अधिग्रहण की इच्छुक है, उसे वे भारत में अधिग्रहण की सलाह दे रहे हैं क्योंकि भारत के आर्थिक विकास के बारे में स्थिति बहुत स्पष्ट व सकारात्मक है। इसके बावजूद भारत में अधिग्रहण करने वाली कम्पनियों के लिए बाधाएं भी अनेक हैं। जिनमें नियामक कठिनाइयां शामिल हैं। गत वर्ष अमरीका की कम्पनियों ने अनेक भारतीय कम्पनियों का अधिग्रहण किया था जिसकी कुल लागत 2.8 बिलियन डॉलर थी जबकि ब्रिटेन का स्थान पांचवां था।

किसान आन्दोलनों का बढ़ता प्रभाव

■ विश्वेन्द्र सिंह चौहान

उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती ने पिछले दिनों प्रदेश में कृषि के विकास के लिऐ नई कृषि नीति की घोषणा बहुत जोर शोर से की थी। इसमें ठेका खेती से लेकर निजी मंडियों तक काफी ऐसे विषयों का समावेश किया गया था जिनके बारे में देश की कृषि समस्याओं से अनभिज्ञ राजनीतिज्ञ, औद्योगिक जगत और नौकरशाह यह मानते हैं कि इनके द्वारा ही देश के किसानों को फीलगुड कराया जा सकता है। यह नीति लागू किये जाने की घोषणा से जिनको लाभ मिलने वाला था वे ठीक से जश्न मनाने की तैयारी कर ही रहे थे कि उत्तर प्रदेश सरकार ने अचानक यह निर्णय वापस ले लिया। साथ ही रिलायंस फ्रेश पर भी प्रतिबंध लगा कर कैबिनेट सचिव शशांक शेखर की अध्यक्षता में एक समिति इस आशय की बना दी गयी जो यह बताये कि ऐसे मामलों में क्या किया जाना चाहिए।

प्रदेश के व्यापारी संगठन मॉल संस्कृति के विरोध में संगठित होकर पहले से ही आन्दोलन कर रहे थे। धीरे–धीरे ही सही पर किसानों के बीच भी यह विचार जोर पकड़ रहा था कि किसानों की जमीनों पर कंपनियों को खेती के लिऐ कब्जा नहीं होना चाहिए। यदि खेती भी कंपनियां कराने लगेंगी तो फिर किसान क्या करेगा। प्रदेश के खुदरा सब्जी और फल विक्रेताओं में भी रिलायंस फ्रेश और सुभिक्षा जैसे स्टोरों के खिलाफ खासा रोष पनप रहा था। जगह–जगह सभाऐं करके लोगों से कहा जा रहा था कि अभी तो देश का किसान ही आत्महत्या कर रहा है यदि फल और सब्जी भी वातानुकूलित मॉल में बिकने लगे तो ढकेल और रेहड़ी पर इनको बेचने वालों के सामने भी आत्महत्या के अलावा और कोई रास्ता नहीं बचेगा। ऐसे माहौल में मायावती द्वारा घोषित नीति ने आग में घी का काम किया और वातावरण वर्तमान सरकार के विरोध में हो गया। प्रदेश में सीधे सरकार विरोधी आन्दोलन शुरू हो सकता है, कुछ इस आशय की खुफिया रिपोर्टो के मिलते ही घोषित की गयी नीतियों को सरकार तत्काल प्रभाव से वापस ले लिया।

मुख्यमंत्री मायावती द्वारा अपने द्वारा घोषित नीति को कुछ दिनों बाद ही वापस ले लेने का निर्णय कई मायनों में काफी महत्त्वपूर्ण है। आजकल देश भर में किसानों के प्रति केन्द्र और कई राज्य सरकारों का जो रुख है जिसमें सेज के नाम पर उनकी जमीनों को, पुलिस की ताकत के बल पर जबरन हड़पने से लेकर सुनहरे भविष्य के झूठे ख्वाब दिखाकर अपनी बात किसी भी तरीके से मनवाने तक सब शामिल है। उसके चलते किसानों पर अपनी जमीनों से बेदखली से लेकर इन विषयों पर आवाज उठाने पर लाठी गोली से लेकर हवालात और जेल तक के खतरे की तलवार लटक रही है। ऐसे किसान विरोधी माहौल में किसानों और खुदरा व्यापारियों के आन्दोलन की सुगबुगाहट के संकेत मात्र से घोषित नीति को वापस लेने की चालाकी मायावती ने दिखायी है। कहा जा रहा है कि वे डर गयीं या इससे राज्य में निवेश के खिलाफ माहौल बनेगा या वे पिछले दरवाजे से बड़ी कंपनियों को प्रवेश दे देंगी। जितने मुंह हैं

उतनी ही बातें हो रही हैं। वे सब परेशान हैं जो संगठित होकर किसानों की जमीन और फुटकर विक्रेताओं से उनका रोजगार छीन लेना चाहते थे और उन पर पुलिस की मार पड़ती देखने के इच्छुक थे।

आगे क्या होगा यह तो भविष्य के गर्भ में है। लेकिन उत्तर प्रदेश के अभी तक के इस घटनाक्रम ने बहुत गंभीर संदेश छोड़ा है। यह बताता है कि सरकार के लिऐ किसानों और फुटकर व्यापारियों या यू कहें कि आम जनता के आन्दोलनों का क्या महत्त्व है। यह बताता है कि सरकार जनता की होती है कंपनियों की नहीं। सरकार के लिऐ वोट का महत्त्व है और कंपनियां सरकार को या उनके इशारों पर खेलने वाले मंत्री को धन दौलत तो उपलब्ध करा सकती है पर उनके लिऐ वोट का इन्तजाम नहीं कर सकतीं। प्रजातंत्र में जनता ही सरकार के लिऐ अन्तिम सत्य है यह बात भी इस सारी घटना से पता चलता है।

यह देश का दुर्भाग्य ही है कि कई दशकों से यहां राष्ट्रीय स्तर पर कोई प्रभावी किसान आन्दोलन सामने नहीं आया और ना ही कोई ऐसा संगठन उभरा जो किसान हित के विषयों पर निर्णायक आन्दोलन चला सके। संसद और विधानसभाओं में बैठने वाले अधिकांश लोग अपने निर्वाचन क्षेत्रों में किसानों के हित के नाम पर ही वोट मांगते नजर आते हैं पर वहां पहुंचने के बाद अपनी पार्टी और उस पार्टी की जिस देशी–विदेशी कंपनी के साथ तालमेल है उसके हित साधन में जुट जाते हैं। किसानों की परेशानियां और उनकी मांगों से उन्हें कोई सरोकार नहीं रहता। आम किसान चूंकि अपने सांसद और विधायक को ही अपना नेता मान लेता है अतः कोई स्वतंत्र किसान आन्दोलन खड़ा नहीं हो पाता।

देश में किसान आन्दोलनों के इतिहास पर गौर करें तो पता चलता है कि अधिकतर आन्दोलन किसानों द्वारा अपनी भूमि को बचाने, तत्कालीन व्यवस्था से हटकर भूमि का वितरण अलग प्रकार से करने, सामंती तरीकों के विरोध करने या फिर पट्टों आदि के द्वारा भूमि प्राप्त करने के लिऐ किये गऐ। माना जाता है कि 1860 व 1950 के बीच केवल 1930 से 1935 के पांच साल ऐसे रहे जिनमें कृषि उत्पादों के मूल्य स्थिर रहे या कम हुए थे। अन्यथा तो पूरे 90 वर्ष तक मूल्यों में लगातार वृद्धि होती रही। इसके परिणामस्वरूप भूस्वामियों और काश्तकारों के बीच कृषि उत्पादों पर नियंत्रण के लिऐ संघर्ष शुरू हो गये। इस पूरे कालखण्ड में किसानों की ताकत में लगातार वृद्धि होती चली गयी और अंग्रेजों के भाासन के अंत होते होते देश में जमीदारों की व्यवस्था काफी कमजोर हो चुकी थी। वास्तव में तो अंग्रेजों के समय से शुरू हुआ कृषि भूमि संघर्ष 1857 के बाद से 1947 तक अंग्रेजों की नीतियों जिनमें आर्थिक और राजनीतिक नीतियों के साथ ही, उस समय बार–बार आने वाले अकाल, नई भू राजस्व व्यवस्थायें जो सामान्यतः काश्तकारों के लिये परेशानी वाली साबित होने लगीं थीं, और नये दीवानी नियमों की वजह से लगातार तीव्र होता गया।

यह देश का दुर्भाग्य ही है कि कई दशकों से यहां राष्ट्रीय स्तर पर कोई प्रभावी किसान आन्दोलन सामने नहीं आया और ना ही कोई ऐसा संगठन उभरा जो किसान हित के विषयों पर निर्णायक आन्दोलन चला सके।

भारत में किसान आन्दोलन के इतिहास में बीसवीं सदी के शुरूआती संघर्षों को दो ऐसी धाराओं में देखा जाता है जो आपस में एक दूसरे के समानान्तर थीं। इनमें से एक धारा तो कर्ज देने वाले सूदखोरों, व्यापारियों, जमीदारों और अंग्रेज प्रशासनिक अधिकारियों आदि के विरूद्ध तात्कालिक आर्थिक संघर्ष था। तो दूसरा आन्दोलन जो अधिक संगठित और संवेदनशील था जिसका नेतृत्व महात्मा गांधी के हाथों में था। कुछ आन्दोलन सामंतवादी विरोधाभासों से उत्पन्न हुए क्योंकि तात्कालिक सामंतवादी शक्तियों, अफसरशाही और नेताओं के परदे के पीछे के गठबंधन के कारण भूमि सुधारों का धरातल पर क्रियान्वयन बहुत धीमा, यद्यपि यह सुधार राज्य की नीति का हिस्सा थे। महात्मा गांधी की मृत्यु के बाद तिभागा और तिलंगाना आन्दोलन की समाप्ति हुयी किन्तु इनके विकल्प के रूप में ग्रामदान आन्दोलन और विनोवा का भूदान आन्दोलन उभरा। वास्तव में ये

जब हमारी सरकारें बहुत बड़ी कंपनियों की मांगों के आगे लगातार घुटने टेक रही हों तो वर्तमान में देश के सभी छोटे–बड़े किसान संगठन को एक साझा मंच बनाकर देश के छोटे और मझोले सहित सभी किसानों के हितों की, उनके सम्मान की, उनके स्वाभिमान की, प्रभावी तरीके से रक्षा के लिए आगे आना चाहिए। क्षेत्रीय स्तर पर समस्याओं को ध्यान में रखते हुऐ अखिल भारतीय स्तर पर किसान आन्दोलन आज की बहुत बड़ी जरूरत है।

आन्दोलन गांधी के बाद उनकी परिकल्पना के विस्तार थे जिसमें संपत्ति के निजी स्वामित्व को न्यास के स्वामित्व में बदलना था। इसके बाद 1967 में दार्जिलिंग जिले की सिलीगुडी तहसील से नक्सलबाड़ी आन्दोलन का उदय हुआ। इसमें कृषक समिति के द्वारा जमीदारी वर्गों के खिलाफ भूमि सुधारों और सामंतवादी शेषण के मुद्दों पर लम्बा संघर्ष किया गया। 1977 में जन्मे बरगा आपरेशन का भी अपना एक महत्त्व है जिसके द्वारा बड़ी मात्रा में पट्टेदारों को कानूनी सुरक्षा प्रदान की गयी।

साठ के दशक के बाद कृषक आन्दोलनों की परिस्थितियों में परिवर्तन आने लगा। इससे पूर्व ज्यादातर आन्दोलनों का आधार भूमि व्यवस्था से उपजा असंतोष था तो अब बाजार की ताकतों और वहां पर कृषि उत्पादनों के मूल्य ने किसान के जीवन में मुख्य भूमिका अदा करना प्रारम्भ कर दिया था। इस कारण किसान संगठनों का उद्देश्य भी तदनुसार बदलने लगा। तमिलनाडु में नकदी फसल उपजाने वाले क्षेत्र, महाराष्ट्र में प्याज, गन्ना, बीडी और तम्बाकू वाले क्षेत्र, कर्नाटक में कपास, गन्ना, ज्वार वाले क्षेत्र तथा पंजाब और हरियाण जो गेहूं उपजाने वाले क्षेत्र थे इनमें लम्बे समय तक मजबूत किसान संगठनों के उभरने से किसानों को काफी लाभ मिला। कर्नाटक के कई जिलों में सक्रिय रैयत संघों ने को गैर दलीय आधार पर अपने आप को संगठित किया और उद्योगों के समान ही खेती किसानी के लिये सुविधाओं की मांग की। उडीसा के काश्तकार धान और चावल के कम मूल्य के मुद्दे पर 2000 से आन्दोलनरत रहे। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में किसान यूनियन के रूप में महेन्द्र सिंह टिकेत के नेतृत्व में किसानों ने कुछ समय तक अपनी आकांक्षाओं को आवाज दी।

भूमंडलीकरण और निजीकरण जैसे विषयों पर देश के विभिन्न प्रान्तों में जबरदस्त आन्दोलन देखने को मिले। कर्नाटक का गुलबर्ग जिला तुअर दाल व अन्य कृषि उत्पादों के उचित मूल्य न मिलने के कारण किसानों के आन्दोलनों के कारण चर्चा में रहा।इसी प्रकार बैंगलोर में भी इन्हीं मुद्दों पर मुख्य मंत्री के सरकारी आवास के सामने धरना दिया गया। हकीकत यह है कि इन क्षेत्रों में तुअर दाल, अरेका फल, नारियल और दुग्ध उत्पादकों की लगातार बिगडती हालत के पीछे देश में विश्व व्यापार संगठन के कारण लागू की गयी नीतियों को माना गया। भूख से मृत्यु और कर्ज, फसल के खराब होने, तथा फसल का उचित मूल्य न मिलने के कारण किसानों के द्वारा की जा रही आत्महत्याओं के कारण भी कुछ छुटपुट आन्दोलन सामने आये पर वे सरकारी नीतियों को प्रभावित करने में असमर्थ रहे। एआईकेएसएस ने उप्र के फैजाबाद जिले में मार्च 2001 में नयी कृषि नीति के विरोध में एक सम्मेलन का आयोजन किया। इसके बाद ''लुटेरे भगाओ, कृषि बचाओ'' अभियान शुरू किया गया। ''ऋण से स्वतंत्रता'' नाम का प्रभावशाली सम्मेलन पंजाब के मनसा में आयोजित किया गया।डब्ल्यू टी ओ के दोहा दौर के विरोध में स्वदेशी जागरण मंच की अगुआई में दिल्ली में एक वृहद रैली का आयोजन किया गया।

खेती किसानी पर बाजार के प्रभाव के चलते समस्याओं के नित नये क्षेत्र सामने आ रहे हैं। इस परिपेक्ष में देश के विभिन्न हिस्सों में विभिन्न संगठन समूहों द्वारा किये जा रहे किसान आन्दोलनों में थोड़ा कम या ज्यादा होकर भी उनकी भाषा, मांगें, कार्यनीतियां और युक्तियां लगभग एक समान ही होती हैं। इस सबके बावजूद जब हमारी सरकारें बहुत बड़ी कंपनियों की मांगों के आगे लगातार घुटने टेक रही हों तो वर्तमान में देश के सभी छोटे–बड़े किसान संगठन को एक साझा मंच बनाकर देश के छोटे और मझोले सहित सभी किसानों के हितों की, उनके सम्मान की, उनके स्वाभिमान की, प्रभावी तरीके से रक्षा के लिए आगे आना चाहिए। क्षेत्रीय स्तर पर समस्याओं को ध्यान में रखते हुऐ अखिल भारतीय स्तर पर किसान आन्दोलन आज की बहुत बड़ी जरूरत है। जब धुर विरोधी और आपस में एक दूसरे को पानी पी पीकर कोसने वाले राजनीतिक लोग और पार्टियां एक साझा उद्देश्य के लिये आपस में गलबहियां डाले नजर आ सकते हैं तो फिर किसान हितों के विषयों पर किसानों के लिये काम करने का दम भरने वाले संगठन एक साथ क्यों नहीं आ सकते।

देश के किसी भी कोने में आन्दोलनरत किसानों पर सरकारी मशीनरी के अत्याचारों के समाचार पर पूरे देश में सामूहिक विरोध दर्ज कराने की मानसिकता और तंत्र जब तक विकसित नहीं कर लिये जाते तब तक कैसे माना जा सकता है कि किसानों की वर्तमान समस्याओं से मुक्ति संभव है। यह जितना जल्दी कर लिया जाये उतना ही अच्छा है। ❖

सार्वजनिक उद्यमों की उल्लेखनीय उपलब्धि

सार्वजनिक उद्योगों के कार्य निष्पादन ने सुधार पश्चात काल में, खासकर पिछले छह-सात वर्षों में अपने उपर लग रहे सभी झूठे आरोपों को गलत साबित कर दिया है।

■ **रुद्रदत्त**

केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों का वर्ष 2005–06 के लिए सर्वेक्षण लोक सभा में पेश किया गया। इस सर्वेक्षण से पता चलता है कि केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम अपने लाभ को महत्वपूर्ण रूप में बढ़ाने की कोशिश में कामयाब हुए हैं। उन्होंने आन्तरिक संसाधन सृजन, विदेशी मुद्रा अर्जन और सरकारी खज़ाने में लाभांश के साथ करों एवं शुल्कों द्वारा अधिक योगदान दिया है। उन्होंने अपनी बिक्री में गत वर्ष की तुलना में 11.86 प्रतिशत की महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की है। इतना ही नहीं यह किन्तु जहां 2000–2001 में 110 सार्वजनिक उद्यम घाटे पर चल रहे थे, अब उनकी संख्या कम हो कर 2005–06 में 58 हो गयी है।

केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के हाल के वर्षों में उद्यमों की उज्जवल होते निष्पादन को सरकार और जनता स्वीकार करने लगी है। इसका प्रमाण इस बात से मिलता है कि केन्द्रीय सरकारी क्षेत्र के उद्यमों ने 2005–06 में 70,000 करोड़ रुपये से अधिक शुद्ध लाभ प्राप्त किया। अतः सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के निष्पादन ने पिछले वर्षों में एक नया मोड़ लिया है।

तालिका 1 : केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों का निष्पादन

करोड़ रुपये

	2000-01	2001-02	2002-03	2003-04	2005-06	2006-07
1. कार्यशील उद्यमों की संख्या	234	231	226	230	227	225
2. प्रयुक्त पूंजी	331,372	389,934	417,160	452,236	504,407	581,250
3. कुल बिक्री	458,237	478,731	57,283	630,704	744,307	832,584
4. कर-पूर्व लाभ	24,967	38,233	48,618	71,144	85,550	84,250
5. कर-पश्चात शुद्ध लाभ	15,653	25,978	32,344	52,985	64,963	70,288
6. लाभ कमाने वाले उद्यमों का शुद्ध लाभ	28,494	36,432	43,316	61,606	74,733	76,240
7. घाटे वाले उद्यमों का शुद्ध घाटा	12,841	10,454	10,972	8,522	9,356	5,952
8. लाभ कमाने वाले उद्यम (संख्या)	123	120	119	139	138	157
9. घाटे वाले उद्यम (संख्या)	110	109	105	89	79	58
केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के वित्तीय अनुपात						
10. प्रयुक्त पूंजी पर कुल विक्रय	138	123	137	139	147	143
11. कर-पूर्व कुल लाभ का प्रयुक्त पूंजी से प्रतिशत	14.7	16.2	17.4	21.0	21.5	18.3
12. प्रयुक्त पूंजी पर शुद्ध लाभ	4.7	6.7	7.7	11.7	12.9	12.1

स्रोत : सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम का सर्वेक्षण (2005-06) खंड 1

इसका स्वीकार करते हुए 11वीं योजना के दिशानिर्देश पत्र ने यह उल्लेख किया है। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों ने एक विविधीकृत औद्योगिक आधार को कायम करके देश के आर्थिक विकास में मुख्य योगदान दिया है। कुछ केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों ने वित्तीय दृष्टि से कई वर्षों से महत्त्वपूर्ण परिणाम दिखाए हैं और हाल ही में कुछ अन्य ने भी अपने निष्पादन में एक नया मोड़ लिया है।'' (पृ. 37)

(उपलब्ध सामग्री के आधार पर सार्वजनिक क्षेत्र में उद्यमों का ब्यौरा तालिका 1 में दिया गया है।)

ध्यान देने योग्य बात यह है कि जहां 2005–06 में कर–पूर्व लाभ 84,250 करोड़ रुपये था, वहां कर–पश्चात लाभ

तालिका 2

लाभ कमाने वाले 10 सर्वोच्च उद्यम

		शुद्ध लाभ (2005–06) करोड़ रुपये
1.	तेल और प्राकृतिक गैस निगम लि.	14,431
2.	भारत संचार निगम	8,940
3.	राष्ट्रीय थर्मल पावर निगम	5,820
4.	इंडियन ऑयल कार्पोरेशन	4,915
5.	स्टील अथॉरटी ऑफ इंडिया	4,013
6.	गैस अथॉरटी ऑफ इंडिया	2,310
7.	राष्ट्रीय खनिज विकास निगम	1,828
8.	न्यूक्लियर पावर निगम	1,713
9.	कोल इंडिया लि.	1,712
10.	आयॅल इंडिया लि.	1,690
	कुल योग	**47,371**

70,288 करोड़ रुपये था। प्रयुक्त पूंजी के अनुपात रूप में कर–पूर्वलाभ 18.3 प्रतिशत था और कर–पश्चात लाभ की दर 12.1 प्रतिशत थी। जाहिर है कि ये दरें काफी ऊंची हैं जिससे इस बात का संकेत प्राप्त होता है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम अच्छा लाभ कमा रहे हैं। यदि गत छः वर्षों के आंकड़ों पर दृष्टि डालें, तो पता चलता है कर–पूर्व लाभ की दर जो 2000–01 में 14.7 प्रतिशत थी धीरे–धीरे बढ़कर 2004–05 में 21.5 प्रतिशत हो गयी परन्तु 2005–06 में थोड़ी कम हो कर 18.3 प्रतिशत रही, फिर भी इसका स्तर काफी ऊंचा है।

लाभ कमाने वाले उद्यमों की संख्या जो 2000–01 में केवल 123 थी बढ़कर 2005–06 में 157 हो गयी। इसके विरुद्ध घाटे में चल रहे उद्यमों की संख्या जो 2000–01 में 110 थी, लगातार घटते हुए 2005–06 में केवल 58 रह गयी। परिणामतः घाटे में चल रहे उद्यमों का कुल घाटा जो 2000–01 में 12,841 करोड़ रुपये था, कम होकर 2005–06 में केवल 5,952 करोड़ रुपये हो गया। अतः कुल घाटे की राशि इन छः वर्षों में आधे से भी कम हो गयी। इसके विरुद्ध, लाभ कमाने वाले उद्यमों का कुल लाभ जो 2000–01 में 28,494 करोड़ रुपये था बढ़कर 2005–06 में 76,240 करोड़ रुपये हो गया अर्थात् यह 2.67 गुना हो गया। स्पष्ट है कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों की छवि में एक गुणात्मक परिवर्तन हुआ है और इन्हें सदा घाटे में चलने वाले उद्योग समझना भारी भूल है। 10 सर्वोच्च सार्वजनिक उद्यमों ने 47,371 करोड़ रुपये का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जो कुल सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के कुल लाभ अर्थात 76,240 करोड़ रुपये का 62 प्रतिशत था। जाहिर है कि सार्वजनिक क्षेत्र के ये भी काय उद्यम दुधारू गायों का कार्य करते हैं। यदि 10 सार्वजनिक उद्यमों के निष्पादन पर ध्यान केन्द्रित किया जाए, तो सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के घाटे को और भी घटाया जा सकता है।

अर्थव्यवस्था में योगदान

केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों का सकल देशीय उत्पादन में बाजार कीमतों पर भाग 2004–05 में 11.68 प्रतिशत था और 2005–06 में 11.12 प्रतिशत था। इस मूल्य वृद्धि में करों और शुल्कों का भाग 2005–06 के दौरान 46 प्रतिशत था जबकि यह 2004–05 में 42 प्रतिशत था। मूल्य वृद्धि में शुद्ध लाभ का भाग 2005–06 में 26 प्रतिशत था, वेतन और मजदूरी का 19 प्रतिशत और ब्याज का भाग 2004–05 में 10 प्रतिशत से कम हो कर 2005–06 में 9 प्रतिशत हो गया। (देखिए तालिका 4)

केन्द्रीय कोष में योगदान

केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम लाभांश, सरकारी ऋणों पर ब्याज, करों एवं शुल्कों के रूप में केन्द्रीय खजाने को योगदान देते हैं। सरकारी खजाने में योगदान का मुख्य भाग इन उद्यमों द्वारा करों एवं शुल्कों के रूप में होता है जो 84.42 प्रतिशत है इसके बाद लाभांश 15.47 प्रतिशत हैं। ब्याज का भाग जो 2004–05 में 0.66 प्रतिशत था, कम हो कर 2005–06 में 0.11 प्रतिशत हो गया। यह इस बात का प्रमाण है कि केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम अब सरकार पर कम निर्भर हैं क्योंकि इनके पास अपने रिज़र्व और अतिरेक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं।

अचल पूँजी निर्माण में योगदान

सरकारी क्षेत्र में उत्पादन की प्रति इकाई के लिए प्रयुक्त पूँजी गैर–सरकारी क्षेत्र में कहीं अधिक है। इसका मुख्य कारण सार्वजनिक क्षेत्र के निवेश के रूप में अन्तर है। मुख्य अन्तर निम्न हैं :–

1 सार्वजनिक क्षेत्र के निवेश का बड़ा भाग आधार सरंचना पर खर्च किया जाता है अर्थात सड़क, सिंचाई, आदि जो कि आर्थिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

2 सार्वजनिक क्षेत्र ने अर्थव्यवस्था के कुंजी–क्षेत्रों का विकास करने में महत्त्वपूर्ण कार्यभाग अदा किया है, उदाहरणार्थ,

तालिका 3

10 सर्वोच्च घाटे में चल रहे उद्यम

		शुद्ध घाटा (2005–06) करोड़ रुपये
1.	फर्टिलाइजर कार्पोरेशन ऑफ इंडिया	1,294
2.	हिन्दुस्तान फर्टिलाइजर कार्पोरेशन	965
3.	हिन्दुस्तान फोटो फिल्म विनिर्माण कं.	561
4.	बने स्टैंडर्ड कम्पनी	443
5.	आई.टी.आई. लि.	423
6.	हिन्दुस्तान केबल्स लि.	295
7.	कोंकन रेलवे कार्पोरेशन लि.	236
8.	मद्रास फर्टिलाइजर लि.	132
9.	राष्ट्रीय टैक्सटाइल कार्पोरेशन	104
10.	ब्रह्मपुत्र वैली फर्टिलाइजर कार्पोरेशन	100
	कुल योग	**4,550**

तालिका 4
केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में मूल्य वृद्धि के विभिन्न अंग

करोड़ रुपये

शुद्ध मूल्य वृद्धि	2005-06	प्रतिशत	2004-05	प्रतिशत
1. शुद्ध लाभ	61,025	26	63,888	28
2. ब्याज	22,283	9	22,869	10
3. कर एवं शुल्क	10,5853	46	94,671	41
4. वेतन एवं मजदूरी	45,625	19	48,629	21
कुल	2,34,786	100	2,30,058	100

रेलवे, लौह तथा इस्पात, संचालन–शक्ति, तेल की खोज, सिंचाई, आदि अपने स्वभाव से ही ये क्षेत्र अधिक पूंजी गहनता वाले हैं।

तालिका 6 में दिए गये आंकड़ों से पता चलता है कि सकल अचल पूंजी–निर्माण जो 1950–51 में सकल देशीय उत्पाद का 2.4 प्रतिशत था बढ़कर 1960–61 में 6.4 प्रतिशत हो गया। इसका कारण दूसरी योजना में भारी तथा मूल उद्योगों की तेजगति से वृद्धि करना था। परन्तु ऐसे क्षेत्रों में जो अभी तक अविकसित ही थे, नये प्लान्ट और मशीनरी को बढ़ावा देने की प्रक्रिया 1965–66 तक जारी रही। 1965–66 और 1966–67 में पड़े भारी सूखे ने इस प्रवृत्ति को पलट दिया और यह 1970–71 में गिरकर सकल देशीय उत्पाद का 5.5 प्रतिशत हो गया। तत्पश्चात् सत्तर और अस्सी के दशक में इसमें तेजी आयी और यह 1990–91 में 9 प्रतिशत के उच्च स्तर पर पहुंच गया। अतः सार्वजनिक क्षेत्र ने सकल अचल पूंजी निर्माण को बढ़ाने में भारी योगदान दिया और इस प्रकार एक सबल औद्योगिक आधार की बुनियाद रखी।

तालिका 5 : केन्द्रीय खजाने में योगदान

(करोड़ रुपये)

	2005.06	प्रतिशत	2004.05	प्रतिशत
1. लाभांश	19,393	15.47	15,201	13.74
2. ब्याज	138	0.11	732	0.66
(क) उपयोग (1+2)	19,531	15.58	15,933	14.40
(ख) कर एवं शुल्क (3 से 4)	105,853	84.42	94,671	85.60
3. उत्पादन शुल्क	53,203	42.43	44,262	40.02
4. सीमा शुल्क	8,601	6.86	10,432	9.43
5. निगम कर	26,045	20.77	23,614	21.35
6. बिक्री कर	5,027	4.01	4,488	4.06
7. लाभांश कर	3,243	2.59	2,742	2.48
8. अन्य शुल्क एवं कर	9,734	7.76	9,133	8.26
कुल (क + ख)	1,25,384	100.00	1,10,604	100.00

चूंकि आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया को बाद में भी प्रोत्साहन दिया गया, सकल अचल पूंजी–निर्माण में सार्वजनिक क्षेत्र का योगदान 2004–05 में भी 6.5 प्रतिशत के इर्दगिर्द रहा। कारण यह है कि भारी और मूल उद्योगों के बहुत से क्षेत्र निजी क्षेत्र अपने आन्तरिक संसाधनों के प्रयोग द्वारा ही निवेश बढ़ा रहा है, परन्तु सार्वजनिक क्षेत्र के सकल अचल पूंजी–निर्माण में सरकारी क्षेत्र की भागीदारी सुधार उपरान्त काल में समाप्त हो गयी है।

तालिका 6 : सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा अचल पूँजी निर्माण

	मूल्य (करोड़ रुपये)	सकल देशीय उत्पाद का प्रतिशत
	(1993 - 94 की श्रृंखला	
1950-51	241	2.4
1960-61	1,091	6.4
1970-71	2,505	5.5
1980-81	12,031	8.4
1990-91	51,124	9.0
1999-00	1,20,389	6.2
	1999-00 के आधार वर्ष की नयी श्रृंखला	
1999.00	1,29,286	6.6
2004.05	2,04,638	6.5

स्रोत : भारत सरकार आर्थिक समीक्षा (2006-07)

कर्मचारी कल्याण

सार्वजनिक क्षेत्र का मूल्यांकन करते समय इसमें काम करने वाले कर्मचारियों के वेतन एवं मजदूरी, मकानों, चिकित्सा एवं शिक्षा संबन्धी सुविधाओं में लगातार उन्नति को नहीं भूलना चाहिए। तालिका 7 में दिए गए आकंड़ों से साफ जाहिर है कि सरकारी क्षेत्र के कर्मचारियों के वास्तविक वेतन एवं मजदूरी में 1987–88 और 2005–06 के दौरान 4.9 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हुई और कर्मचारियों की वास्तविक मजदूरी 1987–88 में 28,820 रुपये से बढ़कर 2005–06 में 69,956 रुपये हो गयी। इससे श्रम वर्ग की वास्तविक मजदूरी में वृद्धि का संकेत प्राप्त होता है।

31 मार्च 2005 के सरकारी क्षेत्र द्वारा श्रमिकों के लिए गृह–निर्माण पर 6,163 करोड़ रुपये खर्च किए और इस प्रकार 8. 4 लाख श्रमिकों के लिए मकान बनाए गए। दूसरे शब्दों में 50.5 प्रतिशत श्रमिकों के लिए मकानों की व्यवस्था की गयी। इस दृष्टि से सार्वजनिक क्षेत्र श्रमिकों के लिए सुविधाएं उपलब्ध कराने में मार्गदर्शक का कार्य करता है। यह एक स्वस्थ एवं अभिनन्दनीय प्रवृत्ति है।

विदेशी मुद्रा का अर्जन

सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों द्वारा आयात–प्रतिस्थापना को प्रोन्नत करने में महत्त्वपूर्ण कार्य भाग अदा किया है और इसके द्वारा 2005–06 में वस्तुओं एवं

तालिका 7 : सरकारी उद्यमों में मजदूरी की प्रवृत्ति		
	1987-88	2005-06
सरकारी क्षेत्र के कर्मचारियों का औसतन वेतन चालू कीमतों पर रुपये प्रतिवर्ष	28,820	2,76,760
औद्योगिक श्रमिकों का उपभोक्ता कीमत सूचकांक (1982-100)	137	542
औसत वास्तविक मजदूरी (1982 की		
कीमतों को आधार मानते हुए)	28,820	69950
मजदूरी में वृद्धि का सूचकांक	100	243

नोट : सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के सर्वेक्षण (2005-06) द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों से परिकलित

सेवाओं के निर्यात द्वारा 46,403 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित की है।

निवेश का ढांचा

तालिका 8 में सार्वजनिक क्षेत्र के निवेश सम्बन्धी सूचना दी गयी है। सार्वजनिक क्षेत्र का 57.5 प्रतिशत निवेश खनन एवं विनिर्माण में है। इसमें भी, निवेश का अधिकतर भाग अर्थात् 47 प्रतिशत मूल एवं भारी उद्योगों में है – जैसे स्टील, कोयला, पावर, पैट्रोलियम, उर्वरक एवं परिवहन उपकरण – जो एक ओर आधार संरचना का विकास करता है और दूसरी और मूल उद्योगों को बढ़ावा देता हैं। जहां तक सेवा क्षेत्र का सम्बन्ध है, यह भी वित्तीय सेवाओं को उपलब्ध कराने में लगा हुआ है, और इससे वित्तीय आधारसंरचना मजबूत हो रही है। इसके अतिरिक्त, टेलीसंरचना सेवाओं में निवेश भी आधार संरचना में निवेश है और जहां निजी क्षेत्र दूर–दराज के क्षेत्रों में सेवाएं उपलब्ध कराने में हिचकिचाता है, वहां सार्वजनिक क्षेत्र इस कमी की भरपाई करता है और दूर–दराज के क्षेत्रों में टेली संचार सेवाओं की पहुंच बढ़ाकर इनका शहरी एवं औद्योगिक क्षेत्रों के साथ सम्पर्क बढ़ाता है। अतः यदि कुल रूप में सोचा जाए, तो सार्वजनिक क्षेत्र के निवेश का लगभग 75 प्रतिशत मूल उद्योगों, आर्थिक एवं वित्तीय आधार सरचना के विकास के लिए जुटा हुआ है। जाहिर है कि निवेश का ढांचा सार्वजनिक क्षेत्र के केन्द्रीय महत्त्व का संकेतक है।

निष्कर्ष यह कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों ने देश का आद्योगिक आधार कायम किया है। यह राष्ट्रीय समन्वय में योगदान देता है। साफ जाहिर है कि यदि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को स्वायत्तता प्रदान कर दी जाएं, तो वे अपनी कुशलता प्रोन्नत कर सकते हैं। सार्वजनिक क्षेत्र की बदलती हुई छवि अभिनन्दनीय है।

केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के रिजर्व और अतिरेक 2005–06 में 3,59,077 करोड़ रुपये थे जबकि 2003–04 में 2,59,582 यह करोड़ रुपये थे। इसका अभिप्राय यह कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों ने 2 वर्ष की छोटी सी अवधि के दौरान लगभग एक लाख करोड़ रिजर्व और अतिरेक में जुटाए। सरकार ने यह निर्णय किया कि सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में नवरत्न और लघुनवरत्न कम्पनियों को अपने रिजर्व का केवल 30 प्रतिशत केवल सार्वजनिक क्षेत्र की पारम्परिक निधियों में निवेश करने की इजाजत होगी। यह निर्णय आर्थिक मामलों पर मंत्रिमंडल की समिति द्वारा जुलाई 2007 में लिया गया। इस निर्णय पर वामपंथी पार्टियों ने तीखी आलोचना की है। मार्क्सवादी पार्टी के पोलित ब्यूरो के सदस्य और सीटू नेता डॉ. एम.के. पांधे ने यह आरोप लगाया है कि ''सरकार को सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के रिर्जव और अतिरेक को सार्वजनिक निवेश में इस्तेमाल करना चाहिए और इस प्रक्रिया के लिए ऋण–मार्किट से आवश्यक समर्थन प्राप्त करना चाहिए, इसकी बजाए कि सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा अर्जित बहुमूल्य सार्वजनिक बचत को सट्टा बाजार में लाभ प्राप्त करने के लिए अपनिर्देशित कर दिया जाए।'' इस आलोचना में काफी बल है और सरकार को अधिक विवेकपूर्ण रूप में कार्य करना चाहिए ताकि यह सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों मे निवेश में विस्तार कर सके और इसका प्रयोग अन्य सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए कर सके। ❖

तालिका 8

केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के निवेश का ढांचा (2005-06)

	निवेश (करोड़ रुपये)	कुल का प्रतिशत
1. निर्माणाधीन कम्पनियां	6,878	1.8
2. खनन एवं विनिर्माण	2,26,049	57.5
1 पावर	79,854	20.3
2 पेट्रोलियम	47,329	12.0
3 स्टील	16,069	4.1
4 उर्वरक	14,722	3.8
5 इंजीनियरिंग	11,811	3.0
6 टैक्सटाइल्स	19,793	5.0
7 खनन	26,321	6.7
8 उपभोक्ता वस्तुएं	4,351	1.1
9 परिवहन उपकरण	3,289	0.8
10 रसायन एवं औषधियां	2,431	0.6
11 कृषि आधारित उद्योग	78	0.0
3. सेवाएं उत्पन्न करने वाले उद्यम	1,60,130	40.7
1 वित्तीय सेवाएं	93,452	23.5
2 टेलीसंचार सेवाएं	20,745	5.3
3 औद्योगिक विकास एवं परामर्श	18,792	4.8
4 परिवहन सेवाएं	7.143	1.8
5 अन्य सेवाएं	20,000	5.1
कुल योग	3,93,057	100.0

खुदरा व्यापार को बचाना देशहित में आवश्यक - स्वामी चिन्मयानन्द

स्वदेशी जागरण मंच द्वारा खुदरा बाजार में विदेशी पूंजी निवेश एवं देशी उद्यमियों के बढ़ते एकाधिकार के विरुद्ध राष्ट्रव्यापी आन्दोलन एवं चर्चा का निर्णय लिया गया था। इस कड़ी में उत्तर प्रदेश के हाथरस जनपद में खुदरा व्यापारियों का सम्मेलन आयोजित किया गया।

■ स्वदेशी संवाद

दिनांक 31–8–2007 को स्व.जा.मंच हाथरस के तत्वावधान में मेडूगेट स्थित गोपाल धाम सभागार में 'खुदरा व्यापारी सम्मेलन' आयोजित हुआ। सम्मेलन का शुभारम्भ स्व.जा.मंच के संस्थापक राष्ट्रऋषि स्व. दत्तोपंत ठेंगड़ी व भारत माता के छवि चित्र पर सम्मेलन के मुख्य अतिथि स्वामी चिन्मयानंद जी व कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे उद्योगपति ठा. अवधेश कुमार सिंह द्वारा संयुक्त रूप से मार्ल्यापण व दीप प्रज्जवलन से हुआ।

खुदरा व्यापारी सम्मेलन के मुख्य अतिथि एवं पूर्व केन्द्रीय गृह राज्य मंत्री स्वामी चिन्मयानन्द ने सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा कि खुदरा व्यापार को बचाना देशहित के लिए बहुत आवश्यक है और अगर खुदरा व्यापार न बचा तो देश में बेरोजगारी की समस्या और ज्यादा विकराल हो जायेगी। उन्होंने आगे कहा कि इससे देश की आंतरिक सुरक्षा भी प्रभावित होगी और अगर धीरू भाई अम्बानी आज जीवित होते तो वह कभी भी अनिल एवं मुकेश अम्बानी को खुदरा व्यापारियों के पेट पर लात मारने की अनुमति नहीं देते। उन्होंने कहा कि खुद धीरू भाई अम्बानी ने भी जीवन की शुरूआत छोटे खुदरा व्यापार से की थी। स्वामी चिन्मयानंद ने कहा कि खुदरा व्यापार देश की आन बान व शान है इस पर चोट सहन नहीं की जायेगी।

उन्होंने आगे कहा कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों की निगाह में परिवार का महत्व न होकर बाजार का महत्व होता है लेकिन भारतीय संस्कृति में परिवार का महत्व होता है और खुदरा व्यापार व्यापारियों का परिवार है। सम्मेलन के विशिष्ट अतिथि श्री रमेशचन्द आर्य आढ़ती ने खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश के खिलाफ जोरदार आवाज उठाई। सम्मेलन को लेकर युवा भारी उत्साह से लबालब थे।

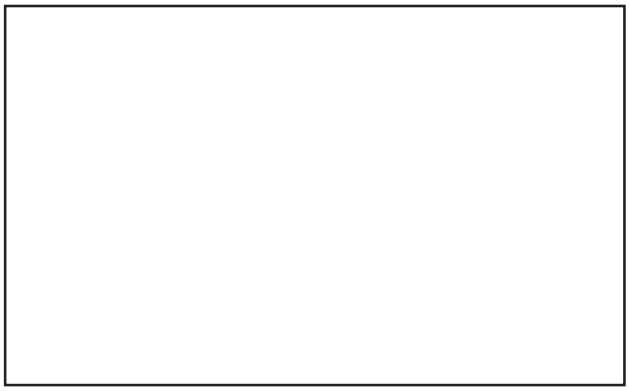

स्वामी चिन्मयानंद जी को स्मृति चिन्ह भेंट करते श्री नरेन्द्र आर्य एवं श्री सिंह

सम्मेलन को मंच के प्रदेश संगठक डॉ. चन्द्रमोहन ने सम्बोधित करते हुए कहा कि खुदरा व्यापार देश के लोगों की आजीविका व रोजगार का प्रमुख साधन है। बिना किसी सरकारी पहल के खुदरा व्यापार व्यक्तियों को स्वाभिमान के साथ आजीविका एवं रोजगार उपलब्ध कराता है। डॉ. चन्द्रमोहन ने कहा कि हाथरस जनपद के पुरदिल नगर कस्बे का मंगा मोती का व्यवसाय इसका प्रमाण है।खुदरा व्यापार बचाओ, रोजगार बचाओ सम्मेलन में मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए स्वदेशी जागरण मंच उत्तर प्रदेश के प्रान्त संगठक श्री चन्द्रमोहन ने कहा कि आज देश का दुर्भाग्य है कि हमें अपने ही क्षेत्र में स्वदेशी आन्दोलन चलाने की आवश्यकता पड़ी। उन्होंने बताया कि आज देश में ठेका खेती, खुदरा व्यापार में विदेशी पूंजी निवेश की चर्चा चल रही है यह हमारे क्षेत्र के स्वाभिमान व सम्मान पर चोट है। इस देश के व्यापार को खत्म कर देश को आर्थिक रूप से दिवालिया बनाने व देश के आर्थिक तानेबाने को ध्वस्त करने की साजिस है। उन्होंने बताया कि यह बहुराष्ट्रीय कम्पनियां हमारे देश में आकर हमारे देश की पूंजी को यहां से बाहर ले जाकर यहां के व्यापारी को बेरोजगार करने की साजिश है। यह कम्पनियां यहां के निवासियों को सब्जबाग दिखाकर यहां के कमजोर व गरीब व्यक्तियों को दबा कर अपना उल्लू सीधा करेंगी।

खुदरा व्यापार सम्मेलन के विशिष्ट अतिथि श्री संजीव माहेश्वरी सी.ए. (आगरा) ने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के खुदरा व्यापार में प्रवेश को भारत की स्थितियों के प्रतिकूल बताते हुये कहा केन्द्र सरकार के इस निर्णय से बेरोजगारी बहुत बढ़ेगी।. सम्मेलन में बोलते हुए आगरा से आये स्वदेशी जागरण मंच के प्रदेश मंत्री श्री संजीव माहेश्वरी ने कहा कि खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश की अनुमति देकर केन्द्र सरकार ने जनविरोधी कार्य किया है। उन्होंने बताया कि खुदरा व्यापार में

कार्यक्रम में उपस्थित व्यापारी एवं समाज के गणमान्य व्यक्ति

विदेशी पूंजी निवेश से हमारे देश में 4 करोड़ लोगों का रोजगार छिन जाऐगा, जिससे देश के लगभग 16 करोड़ लोगो के साथ रोजी रोटी का संकट पैदा हो जाएगा जिससे देश में अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी तथा देश की अर्थव्यवस्था छिन्न–भिन्न हो जाएगी। इसके लिए आवश्यक है कि केन्द्र व प्रदेश सरकारें इस ओर तुरन्त हस्तक्षेप करआने वाले इस संकट को तत्काल रोकें।

सम्मेलन की अध्यक्षता कर रहे श्री अवधेश कुमार सिंह व नरेन्द्र आर्य ने संयुक्त रूप से स्वामी चिन्मयानन्द को प्रतीक चिन्ह भेंट किया। सम्मेलन के संयोजक व विभाग सहसंयोजक नरेन्द्र आर्य ने सभी का आभार प्रगट किया। सम्मेलन की व्यवस्था में सन्दीप सेकसरिया, प्रवीन वार्ष्णेय, किशोर अग्रवाल उद्धव कृष्ण शर्मा, मनोज आर्य एंड का सहयोग सराहनीय रहा और इन्होंने संयुक्त रूप से स्वामीजी को तलवार प्रतीक चिन्ह स्वरूप भेंट की। इस मौके पर व्यापारी नेता लक्ष्मीकांत वार्ष्णेय, कपिल अग्रवाल, अनिल वार्ष्णेय राजीव वार्ष्णेय, घी वाले, नरेन्द्र बंसल, नरेश, वार्ष्णेय, अभिषेक, रंजन आर्य, गौरव आर्य, मनोज अग्रवाल माचिस वाले, संतराज सिंह, डालचन्द अग्रवाल प्रिंस सर्विस वाले, राजेश कुमार रवि जोशी आदि अनेक व्यापारी नेता मौजूद थे। सम्मेलन के बाद स्वामी चिन्मयानन्द ने खुदरा व्यापारियों से भेंट कर आन्दोलन में भाग लेने का आह्वान किया। सम्मेलन की सफलता से आयोजक गदगद दिखे तथा व्यापारियों ने आन्दोलन में भाग लेने का संकल्प भी लिया। ❖

जमशेदपुर में खुदरा व्यापार और रोजगार बचाओ मोर्चा की रैली

स्वदेशी जागरण मंच के नेतृत्व में खुदरा व्यापार के खिलाफ एकजुट हुए जमशेदपुर (झारखंड) के व्यापारियों ने संकल्प लिया है कि वे किसी भी कीमत पर बड़ी कम्पनियों एवं विदेशी कम्पनियों को खुदरा व्यापार नहीं करने देंगे, इसके लिए भले ही उन्हें अपनी जान क्यों न देनी पड़े। व्यापारियों ने यह संकल्प पिछले दिनों उस समय लिया जब जमशेदपुर (झारखंड) में स्वदेशी जागरण मंच के तत्वावधान में ''खुदरा व्यापार सह रोजगार बचाओ मोर्चा'' ने बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ एक विराट रैली का आयोजन किया था। रैली का नेतृत्व मोर्चा के प्रान्त संयोजक श्री वंदेशंकर सिंह ने किया था। इस रैली में राज्य के सैकड़ों खुदरा व्यापारियों ने शामिल होकर ''रिलांयस फ्रेस वापस जाओ'', ''वापस जाओ'', ''विशाल मेगामार्ट'' वापस जाओ, ''खुदरा व्यापार में बड़ी कम्पनियों का निवेश बंद करो बंद करो'' जैसे नारे लगाते हुए यह संकल्प लिया कि इसके लिए भले ही उनकी जान क्यों न चली जाए, इन कंपनियों को जमशेदपुर में खुदरा व्यापार हरगिज नहीं करने देगें।

जमशेदपुर में खुदरा व्यापार सह रोजगार बचाओ मोर्चा द्वारा विशाल रैली में शामिल व्यापारी एवं कार्यकर्त्ता

स्वदेशी जागरण मंच के नेतृत्व में आयोजित इस रैली में सरकार से यह मांग की गई कि 24 जनवरी, 2006 को लिखे गए उस निर्णय को वह रद्द करे जिसके तहत खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश को अनुमति दी गई है। सरकार से यह भी मांग की गई कि बंगाल, बिहार एवं उड़ीसा की तर्ज पर कृषि उत्पाद, मांस, मछली, दूध इत्यादि के लिए बड़ी कंपनियों को अपनी दूकानें नहीं खोलने दे। ❖

तिरूपति में स्वदेशी जागरण मंच का राष्ट्रीय विचार वर्ग सम्पन्न

स्वदेशी जागरण मंच आज एक राष्ट्रव्यापी संगठन - रेड्डी

■ स्वदेशी संवाद

स्वदेशी की अवधारणा वर्षों पुरानी है, भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का यह प्रेरणा स्त्रोत था एवं लोकमान्य तिलक, वीर सावरकर, श्री अरविन्द और महात्मा गांधी जैसे ख्याति प्राप्त नेताओं ने स्वदेशी के प्रेरक ज्योति के तहत पूरे देश में आजादी का उद्घोष किया था। उस समय अंग्रेजों की आर्थिक गुलामी के समाधान के रूप में स्वदेशी को उसका वैकल्पिक मार्ग मानकर उसे अपनाया गया।

बंग–भंग के बाद उपजे स्वदेशी आंदोलन और बाद में महात्मा गांधी द्वारा इसको प्रमुख हथियार के रूप में उपयोग करने से आजादी की लड़ाई की दशा और दिशा ही बदल गई थी। गांधी जी का स्पष्ट मानना था कि यंत्रों का न्यूनतम उपयोग हो ताकि मानव संसाधनों को अधिक से अधिक श्रम कार्यो में लगाया जा सके। स्वदेशी का तात्पर्य यही था कि स्थानीय पर्याप्तता हो जिससे देश का दौर अपने स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति अपने बलबूते पर कर सके। स्वदेशी के इन्ही उद्देश्यों को आगे बढ़ाते हुए स्वदेशी जागरण मंच ने आज पूरे देश में अपना कार्यक्रम का विस्तार किया है। और लगभग 15 संगठन इस मंच से जुड़े हुए हैं। संक्षेप में कहें, स्वदेशी जागरण मंच आज एक शक्तिशाली जनसंगठन बन चुका है जो इस देश को एक बलशाली एवं सक्षम और आत्मनिर्भर देश के रूप में पूरे विश्व में स्थापित करना चाहता है। तिरूपति में आयोजित राष्ट्रीय विचार वर्ग में एस.वी. विश्वविद्यालय के कुलपति श्री एस. जयराम रेड्डी ने समापन भाषण में ये बातें कहीं। स्वदेशी जागरण मंच ने तिरूपति में दिनांक 10–11–12 अगस्त 2007 को तीन द्विवसीय विचार वर्ग का आयोजन किया था।

विचार वर्ग का उद्घाटन करते हुए श्री गोविन्दाचार्य, श्री रेड्डी एवं अन्य

कुलपति ने आगे कहा कि पूँजीवाद पूरी तरह बाजार और राज्य पर निर्भर रहता है। जबकि समाजवाद राज्य पर अपने निर्णयों को प्रभावी बनाने के लिए निर्भर होता है। इसके विपरीत स्वदेशी विचार बाजार एवं राज्य से अलग स्थानीय समाज व्यवस्था पर अपने सभी सामाजिक आर्थिक क्रियाकलापों के लिए निर्भर रहता है। स्वदेशी में इसका विस्तार समाज, समुदायों से होते हुए राज्य एवं बाजार तक जाता है। कुलपति महोदय ने कहा कि विज्ञान का छात्र होने के नाते वे विज्ञान एवं तकनीकी आविष्कार को सामाजिक समरस्ता के उपकरण के रूप में देखते हैं। इसलिए योग के विज्ञान को आयुर्वेद एवं अन्य स्वदेशी पद्धतियों में छिपे विज्ञान को समझ कर उसके व्यापक प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है। दरअसल बाजार में भारतीय पहुंच का यह स्वदेशी तरीका है। सामाजिक समरस्ता किसी भी विज्ञान और व्यवस्था का अंतिम लक्ष्य होता है और हर मुद्दों का विश्लेषण इन्हीं कसौटियों के आधार पर करना चाहिए।

आपने कहा कि सम्पन्न राष्ट्र एवं समाज के विकास के लिए विज्ञान को लोकप्रिय बनाने की अत्यधिक आवश्यकता है। लेकिन इस संदर्भ में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि विज्ञान की नकारात्मक प्रवृतियां हावी न हो पाएं। विज्ञान में

Advertisement

Advertisement

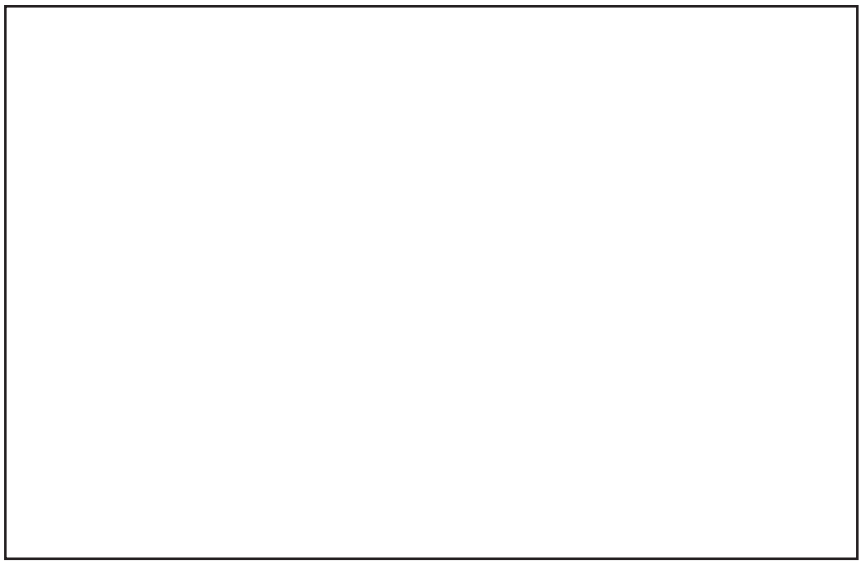

विचार वर्ग को सम्बोधित करते हुए स्जाम के राष्ट्रीय संयोजक श्री मुरलीधर राव

आस्था रखना अच्छी बात है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि अन्य सभी आस्थाओं को विज्ञान के नाम पर समाप्त कर दिया जाए। स्वदेशी आंदोलन को विज्ञान, तकनीकी आदि के प्रति भी अपने स्पष्ट विचार रखते हुए प्रकृति एवं संस्कृति के साथ इसके सम्बन्धों पर भी चर्चा करनी चाहिए। तीन दिन के इस कार्यशाला के प्रति सकारात्मक दृष्टि अपनाते हुए कुलपति महोदय ने कहा कि कार्यशाला में आये सभी सहभागी स्वदेशी के विचारों से लाभान्वित हुए होंगे। अंत में उन्होंने कहा कि भारत की गरिमा और अस्मिता की रक्षा तभी संभव है जब हम स्वदेशी संस्कृति और दर्शन को अपने जीवन में सम्पूर्णता से अपनाएं।

तिरूमाला, तिरूपति देव स्थान के अध्यक्ष श्री करूणाकर रेड्डी उद्घाटन सत्र के विशिष्ट अतिथि थे। उद्घाटन सत्र का विषय था 'सामाजिक पूर्णजागरण का केन्द्र मंदिर और स्वधर्म, स्वावलम्बन एवं स्वराज्य का अभिन्न अंग स्वदेशी आंदोलन'। श्री करूणाकर रेड्डी ने विशिष्ट अतिथि के रूप में बोलते हुए कहा कि विश्व के लगभग सभी धार्मिक विचार वैदिक संस्कृतियों से ही निकले हुए हैं, और इन सभी प्रकार की गतिविधियों का केन्द्र मंदिर हुआ करता था। मंदिर समाज के भीतर ऐसे केन्द्र के रूप में विकसित था जहां से समाज विकास की सभी गतिविधियां संचालित हुआ करती थीं। श्री रेड्डी ने कहा कि भारत की संस्कृति मर्यादित रही है और हमें इसपर गर्व है। लेकिन आजाद भारत में इस संस्कृति पर जितने आक्रमण हुए उतना तो शायद 1000 वर्षों के गुलामी काल में भी नहीं हुआ था।

कालांतर में हिन्दु समाज में भी कुरीतियां बढ़ी जिसका परिणाम हुआ कि हमारे समाज के भीतर दलित को अछूत मान लिया गया एवं मंदिर जैसे पवित्र स्थानों में इनका प्रवेश वर्जित कर दिया गया। आवश्यकता है इस तरह की गलतियों को सुधारने की, और तिरूपति मंदिर इस दिशा में दलित गोविन्दम योजना के तहत प्रयासरत है। श्री रेड्डी ने कहा कि इस योजना के तहत वैंकटेशवर भगवान की मूर्ति एवं उसके पुजारी दलितों की बस्ती तक जाते है तथा रात्रि विश्राम वहीं करते हैं। इस तरह की योजनाएं इसलिए शुरू की गईं ताकि अभिजात्य वर्गों के मन में बैठी गलत धारणा का समाधान हो सके। विवाह जैसे महत्वपूर्ण धार्मिक कार्यों में एक वर्ग विशेष द्वारा अनुचित मात्रा में धन राशि खर्च किए जाने को अनुचित बताते हुए श्री करूणाकर रेड्डी ने कहा कि इसका प्रभाव समाज के अन्य लोगों पर पड़ता है और वो भी नकल से उसी तरह का आयोजन करते हैं। इससे कई लोग कर्जदार हुए हैं। तिरूपति मंदिर में ''कल्याणमस्तु'' नाम से एक योजना शुरू की गई है जिसके अन्तर्गत मंदिर अपने खर्च पर सामूहिक विवाह का आयोजन करता है। तिरूपति इस तरह के कुछ प्रयोगों से समाज में व्याप्त एवं पनप रही कुरीतियों को समाप्त करना चाहता है।

तिरूमाला, तिरूपति मंदिर के कार्यपालक अधिकारी श्री रमनाचार्य ने कहा कि हिन्दू समाज में मंदिर की भूमिका हमेशा से महत्त्वपूर्ण रही है। जहां समाज के लोगों को उच्च जीवन मूल्यों की जानकारी दी जाती थी ताकि समाज एवं राष्ट्र की मर्यादा बनी रहे। श्री रमनाचार्य ने त्रिदिवसीय कार्यशाला में विशेष अतिथि के रूप में भाषण करते हुए ये बातें कहीं। उन्होंने कहा कि मंदिर न केवल मूल्य स्थापना का कार्य करता था अपितु आम लोगों के दैनिक जीवन का भी मार्ग दर्शन करता था। दैनिक जीवन में उत्पन्न समस्याओं एवं शंकाओं का समाधान मंदिर ही करता था। वेद की ऋचाओं का उल्लेख करते हुए श्री रामनाचार्य ने कहा कि मनुष्य के शरीर की तुलना मंदिर से की जा सकती है और आत्मा को मानव शरीर का ईश्वर कहा जा सकता है। प्राचीन समय में मंदिर उच्च कोटि की शिक्षण संस्थाएं, स्वास्थ्य संस्थाएं, अनाथालय चलाते थे। जिससे यह साबित होता है कि मंदिर न केवल धार्मिक गतिविधियों का केन्द्र था अपितु समाज जीवन के सभी कार्यक्रमों का सफलता पूर्वक संचालन करता था। श्री रमनाचार्य ने इस बात पर जोर दिया कि दैनिक जीवन में हमें उच्च मूल्यों को अपनाना चाहिए और अपने माता–पिता, अभिभावक, गुरूजनों, श्रेष्ठजनों एवं वृद्धों को समाज में आदर

और सम्मान देना चाहिए। तिरूमाला, तिरूपति स्थान को इस बात का गर्व है कि वह स्वदेशी जैसे पवित्र कार्य से जुड़ा है। श्री रामनाचार्य ने संगठन को सभी क्षेत्र में सफलता मिलने की कामना की।

स्वदेशी स्वाभिमान आंदोलन के प्रवर्तक श्री गोविन्दाचार्य ने कहा कि मंदिर ही एकमात्र ऐसा आधार है जिसपर हिन्दुत्व जीवित है। प्राचीन समय में मंदिर न केवल धार्मिक कार्यकलापों का केन्द्र था। अपितु समाजिक एवं आर्थिक गतिविधियों का भी केन्द्र था। अपने उद्घाटन भाषण में श्री गोविन्दाचार्य ने कहा कि आगम और निगमों में मंदिर के विभिन्न आयामों की विस्तार से चर्चा है। उन्होंने कहा कि सभी मंदिरों में स्वावलम्बी गोशाला, एक पाठशाला एवं एक आरोग्यशाला अवश्य हुआ होती थी। मंदिर में ही प्राचीन पुस्तकों, ज्ञानों एवं विचारों पर चर्चाएं हुआ करती थीं और इस प्रकार मंदिर को शिक्षा का उच्चतम केन्द्र माना जाता था। पुरूषार्थ के चारों बिन्दुओं धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पर निर्णायक चर्चाएं हुआ करती थीं। मंदिर समाज जीवन में धर्म के अनुपालन के लिए प्रतिबद्ध था। श्री गोविन्दाचार्य ने कहा कि भारत इस मायने में अन्य सभी भोगोलिक क्षेत्रों से उत्कृष्ट हैं क्योंकि प्रकृति ने इसे जो नैसर्गिक संपदा प्रदान की है वह विश्व के अन्य भू–भाग में दुलर्भ है।

श्री गोविन्दाचार्य ने कहा कि हर समाज की अपनी तासीर होती है जिसके अनुसार विश्व व्यवस्था में उसका योगदान तय होता है। भारत को प्रकृति ने जिस तरह की नैसर्गिक संसाधनें दी हैं उससे एक मूल्य आधारित मानवीय संस्कृति का निमार्ण इस देश में हुआ है। हिन्दू समाज मूलतः इन्हीं मूल्यों के प्रति समर्पित है। प्रकृति के इस वरदान के कारण भारत में जो सामाजिक संरचना विकसित हुई वह पश्चिमी देशों से अलग है। हमारे यहां प्रत्येक वस्तु का प्रकृति के साथ तादात्म्य है। सामूहिक जीवन, दान करने की प्रवृत्ति, परहित के लिए त्याग एवं संयमित उपभोग को अपनाकर अत्यधिक उत्पादन जैसी प्रमुख प्रवृत्तियां समाज जीवन की थीं। श्री गोविन्दाचार्य ने कहा कि जैसे व्यक्ति अपने स्वभाव एवं गुण के अनुसार व्यवहार करता है, ठीक उसी प्रकार राष्ट्र भी समाज के विभिन्न अंगों के स्वभाव एवं गुणधर्म के अनुसार कार्य करता है।

श्री गोविन्दाचार्य ने कहा कि मंदिर सामाजिक पुनर्जागरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। हिन्दू समाज ने मंदिर में रहकर ही समरसतापूर्ण जीवन जीने की कला सीखी है। शांतिपूर्ण सहअस्तिव का पाठ भी मंदिर से सीखा जा सकता है। आज समाज जीवन में जितनी भी विकृतियां आई हैं उन सभी का निदान मंदिर में दिखाई देता है। आक्रांताओं नें इसीलिए भारत में मंदिरों को अपने आक्रमण का निशाना बनाया। परिणाम हुआ कि यहां की सामाजिक व्यवस्थाएं चरमरा गयी।

आधुनिक विकास पर आक्षेप करते हुए श्री गोविन्दाचार्य ने कहा, कहने के लिए इस देश में खाद्यान्न उत्पादन कई गुना बढ़ गया है। लेकिन खाद्यान्न उत्पादन करने वाले किसानों की दशा दिनों–दिन दयनीय होती जा रही है। समाज में उत्पन्न समस्याओं का एकमात्र समाधान वर्तमान व्यवस्थाओं का विकेन्द्रीकरण एवं इसका विकल्प ढूंढना है। इसके लिए विद्वानों, विशेषज्ञों बुद्धिजीवियों एवं सज्जन व्यक्तियों का संग्रह करते हुए आन्दोलन का रास्ता अपनाने का सुझाव श्री गोविन्दाचार्य ने दिया।

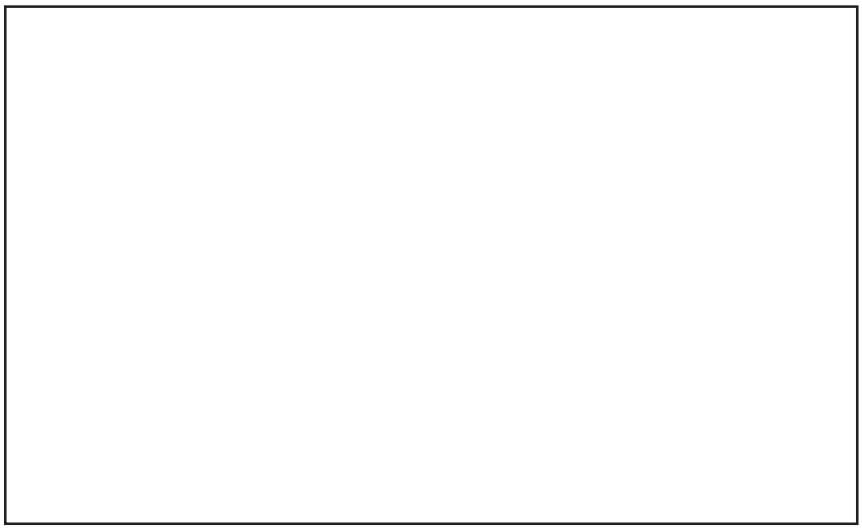

समापन समारोह में बोलते हुए कुलपति श्री एस.जयराम रेड्डी

तीन दिन चलने वाले इस राष्ट्रीय विचार वर्ग में पेशे से चार्टर्ड अकांउन्टेंट रहे श्री एम.आर वेंकटेश ने डब्ल्यूटीओ एवं वैश्वीकरण पर सत्र लिया। श्री आर. सुन्दरम जो स्वदेशी जागरण मंच के दक्षिण भारत के क्षेत्रीय संयोजक हैं ने दक्षिणी राज्यों के अर्थव्यवस्था एवं उसकी विशिष्टता पर सत्र लिया। कर्नाटक के मंच के संयोजक श्री बी.एम. कुमार स्वामी ने स्वेदशी विचार, विशेष आर्थिक क्षेत्र एवं बौद्धिक संपदा अधिकार पर अपने विचार रखे। स्वदेशी जागरण मंच के पश्चिमी आन्ध्र प्रदेश प्रांत की सह संयोजक श्री सांई प्रसाद ने खुदरा व्यापार एवं बेरोजगारी पर सत्र लिया। श्री गोविन्दाचार्य ने गौ आधारित कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं श्री मुरलीधर राव ने स्वदेशी आंदोलन पर विस्तार से अपने विचार रखे। एस.वी. विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. एस. जयराम रेड्डी समापन कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे जबकि श्री मुरलीधर राव ने समापन भाषण किया। ❖

बिहार में अनूठे गोकुल विश्वविद्यालय की स्थापना

श्री के. एन. गोविन्दाचार्य के कर कमलों द्वारा सम्पन्न यह गोकुल विश्वविद्यालय दुनिया का पहला संस्थान होगा जहां गाय से जुड़ी सभी विधाओं के लिए पाठ्यक्रम शामिल किए जाएंगे।

■ **स्वदेशी संवाद**

गोपूजन कर विश्वविद्यालय का उद्घाटन करते हुए श्री गोविन्दाचार्य

बिहार प्रान्त के औरंगाबाद जिला मुख्यालय से 14 किलोमीटर पड़रिया माली स्थित गोकुल धाम में दुनिया के एक अनोखे विश्वविद्यालय की स्थापना की गयी है। गोकुल विश्व विद्यालय नामक इस संस्थान के प्रथम खंड का उद्घाटन राष्ट्रीय चिंतक श्री के.एन. गोविन्दाचार्य के कर कमलों द्वारा दिनांक 19–7–2007 को गौ पूजन के साथ किया गया।

गोकुल विश्वविद्यालय की स्थापना उस भारत को ध्यान में रखकर किया गया है जिनकी छतों से पानी टपकता है, जिनके बच्चे दो हजार रुपये महीने पर सूरत और दिल्ली जाकर जवानी बेचते हैं, झोपड़ पट्टी में रहते हैं और रेलवे लाइनों के किनारे शौच करते हैं। जिनके घर में पानी का अपना पानी नहीं होता, जिनकी पूरी जिन्दगी एक इन्दिरा आवास पाने के इन्तजार में कट जाती है। गोकुल विश्वविद्यालय का उद्घाटन करते हुए माननीय श्री गोविन्दाचार्य जी ने कहा कि किसान के दो पैर हैं एक कृषि और दूसरा गोपालन। गोपालन के बिना खेती करने वाले किसानों की स्थिति उस लंगड़े व्यक्ति जैसी होती है जो जीवन–यापन तो करता है किन्तु वह युग के साथ नहीं चल पाता और पिछड़ जाता है। श्री गोविन्दाचार्य ने आगे कहा कि भारत की खेती अमरीका और ब्राजील की तरह नहीं की जा सकती क्योंकि वहां एक किसान की औसत जोत छः हजार एकड़ है जबकि भारत के औसत किसानों की जोत ढाई एकड़ के लगभग है। उन्होंने गोवंश के नस्ल सुधार की चर्चा करते हुए कहा कि अपनी देशी गायों की नस्ल पिछले पचास–साठ वर्षों में लगातार कमजोर होने का कारण है कि हमारे किसान अपनी गायों के मजबूत बछड़े को बैल बनाकर खेती के कार्य में ले आते हैं जबकि अपने कमजोर बछड़े को सांढ के रूप में छोड़ देते हैं। नतीजतन अपनी देसी नस्ल में लगातार ह्रास होता गया। श्री गोविन्दाचार्य ने कहा कि गोकुल विश्वविद्यालय की स्थापना इन भूले बिसरे मूल्यों को पुर्नस्थापित करने का एक सार्थक प्रयास है। उन्होंने कहा कि गोकुल आधारित व्यवस्था पर लौटे बिना गांव की गरीबी और बेरोजगारी को दूर नहीं कर सकते

स्थापना का उद्देश्य

आजादी की लड़ाई में विदेशियों से मुक्ति के लिए चरखा जैसे आवश्यक हो गया था वैसे ही आज भारत के निम्न,, मध्यम और गरीब नौजवानों के लिए गाय आवश्यक हो गयी है, क्योंकि महज एक गाय से सूरत और गुड़गांव के एस.ई.जेड में काम करने वाले मजदूरों के बराबर आमदनी हो सकती है।

गोकुल विश्वविद्यालय की स्थापना उन निराश किसानों को इज्जत की रोटी व सम्मान की जिन्दगी देने के लिए की गयी है, जिनके पास एक एकड़ तक जमीन है किन्तु हाथ खाली हैं। चार एकड़ का किसान यदि पांच गाय रखकर मिश्रित बहुफसली खेती करे तो रासायनिक खाद नहीं खरीदना पड़ेगी, अपने घर में खर्च होनेवाली सम्पूर्ण ऊर्जा गायों से प्राप्त हो सकती है, भोजन बनाने के लिए लकड़ियों और गण्डों की जरूरत नहीं पड़ेगी। साथ ही कृषि से तीन गुनी ज्यादा आमदनी गौ पालन से होगी।

जब से अंग्रेज भारत आए गोहत्या बढ़ गई। क्योंकि उनका मुख्य भोजन गोमांस था। हर सप्ताह तीन सिपाहियों पर एक पशुधन काटा जाने लगा, परिणाम यह हुआ 1857 में एक आदमी पर छः मवेशी थे वहां 1957 में दो आदमी पर एक मवेशी रह गया और 2001 की पशुगणना के अनुसार चार आदमी पर एक मवेशी। उक्त अवसर पर गोकुल विश्वविद्यालय के संस्थापक श्री संजय सज्जन सिंह ने कहा कि गोकुल विश्व विद्यालय की स्थापना गाय से जुड़ीं गंभीर समस्याओं को लेकर की गयी है जैसे गोआधारित कृषि व्यवस्था, गोआधारित चिकित्सा व्यवस्था, गोआधारित रोजगार व्यवस्था और गोआधारित अर्थ व्यवस्था के निर्माण पर कार्य किया जायेगा। साथ ही इस दिशा में कार्य करने वालों को प्रशिक्षण और प्रमाणन की व्यवस्था की जायेगी। ❖

बदलती जलवायु ला सकती है भुखमरी

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने चेतावनी दी है कि जलवायु परिवर्तन से भारत के बड़े इलाके में सूखे और बाढ़ के हालात पैदा हो सकते हैं। नतीजतन, देश में अनाज की उपज 18 फीसदी तक घट सकती है और भुखमरी का खतरा पैदा हो सकता है। एफएओ के मुताबिक भारत में जिन इलाकों में खेती वर्षा पर निभर है, वहां अनाज की पैदावार में लगभग 12.5 करोड़ टन सालाना की कमी आ सकती है। एफएओ द्वारा जारी एक बयान में डायरेक्टर जनरल जेक्स डिऔफ के हवाले से कहा गया, 'कम वर्षा और कम नमी वाले इलाकों में खेती पर सबसे ज्यादा खतरा मंडरा रहा है।' डिऔफ ने कहा, 'वैश्विक औसत तापमान एक से तीन डिग्री सेल्सियस तक बढ़ने पर ऊंचे अक्षांस वाले इलाकों में पैदावार बढ़ सकती है, हांलाकि तापमान इससे अधिक बढ़ने पर वह कम हो जाएगी। यह फसल के प्रकार पर भी निर्भर है। इसके विपरीत वैश्विक तापमान में थोड़ी–सी भी वृद्धि निचले अक्षांशों खासकर उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में फसलों के उत्पादन में कमी ला सकती है। बार–बार की बाढ़ और सूखे से स्थानीय उत्पादन पर विपरीत असर पड़ेगा।

जलवायु परिवर्तन पर समिति गठित : केन्द्र ने जलवायु परिवर्तन के प्रभावों पर अध्ययन के लिए भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार डॉ. आर चिदंबरम की अध्यक्षता में एक विशेष समिति गठित की है। पर्यावरण एवं वन राज्यमंत्री नमो नारायण मीणा ने राज्यसभा में सांसद एन पी दुर्गा के प्रश्न के उत्तर में बताया कि सरकार ने भारत पर मानवजनित जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन करने और मानवजनित जलवायु परिवर्तन प्रभावों के अक्रमणीयता से निपटने को लेकर भविष्य में किए जाने वाले उपायों का पता लगाने के लिए 7 मार्च 2007 को डॉ. आर चिदंबरम प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार भारत सरकार की अध्यक्षता में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों पर विशेष समिति गठित की है।

यमुना की स्वाधीनता के लिए सत्याग्रह

यमुना सत्याग्रहियों ने स्वतंत्रता दिवस को यमुना की स्वाधीनता के लिए संघर्ष के दिन के रूप में मनाया। उन्होंने नदी की उफनती जलधारा में झंडा फहराया। समारोह में भाग लेने वालों ने नदी के सम्मान की रक्षा और इसकी मुक्ति की कामना की। समारोह में वक्ताओं ने कहा कि यमुना सिकुड़ती जा रही है। पहले यह लालकिले के नजदीक से बहती थी। उन्होंने आरोप लगाया कि पर्यावरण कानून का उल्लंधन करते हुए इसके बाढ़ क्षेत्र में निर्माण किए जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि अक्षरधाम मंदिर का निर्माण अवैध रूप से किया गया और उसके पूरब में कामनवेल्थ गांव बन रहा है। इसी से सटकर एक शॉपिंग माल बनाने का बोर्ड लगा दिया गया है। बाढ़ क्षेत्र में सब्जी लगाने वाले किसानों को बिना नोटिस उजाड़ दिया गया है। उन्होंने कहा कि मुंबई में मीठी नदी के अतिक्रमण का नतीजा वहां बाढ़ के रूप में सामने आया है। यमुना में कंक्रीट निर्माण से दिल्ली का भूजल रीचार्ज नहीं हो पाया। पर्यावरण वैज्ञानिक डॉ. वंदना शिवा ने कहा कि यमुना का बाढ़ क्षेत्र दिल्ली के भू–जल के रीचार्ज के साथ ही जैव विविधता के संरक्षण का क्षेत्र भी है। वक्ताओं ने कामनवेल्थ गांव बनाने के फैसले को सामुदायिक जमीन को हड़पना बताया। उन्होंने कहा कि यमुना दिल्ली गांव वालों की सामूहिक विरासत है। इस निर्माण को उन्होंने बड़ा भ्रष्टाचार बताया और कहा कि पहले 700 करोड़ रुपये खर्च की बात की जा रही थी अब सात हजार करोड़ रुपये खर्च करने की योजना है। समारोह में मैगसेसे पुरस्कार विजेता राजेन्द्र सिंह, जल स्वराज अभियान की डॉ. वंदना शिवा, सुप्रीम कोर्ट के वरिष्ठ वकील प्रशांत भूषण, यमुना अभियान के मनोज मिश्रा और जल लोकतंत्र के लिए लोकमोर्चा के नकवी ने भाग लिया।

किसानों में बढ़ती कर्जदारी

कृषि परिवारों की कर्जदारी संबंधी राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन की रपट के हवाले से अब सरकार ने भी स्वीकार कर लिया है कि देश का किसान दिन–प्रतिदिन कर्ज के बोझ से दबता जा रहा है। कृषि राज्यमंत्री कांतिलाल भूरिया ने राज्यसभा में एक सवाल के जवाब में लिखित जानकारी दी है कि आंध्र प्रदेश के 82 फीसदी किसान परिवार कर्जदार हैं। इसके बाद तमिलनाडु में 74.5 फीसदी किसान परिवार कर्जदार हैं, तीसरे स्थान पर पंजाब है जहां 65.4 फीसदी किसान परिवार कर्जदार हैं। केरल के 64.4 फीसदी और कर्नाटक के 61.6 फीसदी किसान परिवार कर्जदार हैं। कृषि मंत्री के अनुसार समग्र रूप से कृषि कर्जदारी की समस्याओं को सुलझाने एवं पूरे देश में किसानों को राहत पहुंचाने के उपाय सुझाने के लिए भारत सरकार ने प्रो. आर. राधाकृष्णन निदेशक, इंदिरा गांधी विकास अनुसंधान संस्थान (आईजीआईडीआर) की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ दल का गठन किया था। विशेषज्ञ दल ने अपनी रपट प्रस्तुत कर दी है।

काली सूची में डाले गए 769 गैर सरकारी संगठन

कपार्ट के तहत काम करने वाले 769 गैर सरकारी संगठनों को अनियमितता बरतने के कारण काली सूची में डाल दिया गया है। काली सूची में डाले गए सर्वाधिक गैर सरकारी संगठन आंध्र प्रदेश के हैं। वहां के 178 एनजीओ को काली सूची में डाला गया है। दूसरा स्थान बिहार का आता है। यहां के 123 एनजीओ को काली सूची में डाला गया है। इसके बाद तमिलनाडु के 75, कर्नाटक के 72 और उत्तर प्रदेश के 70 गैर सरकारी संगठनों को काली सूची में रखा गया है।

ग्रामीण विकास राज्यमंत्री सूर्यकांत पाटिल ने राज्यसभा में प्यारेलाल खंडेलवाल के सवाल के लिखित जवाब में बुधवार को यह जानकारी दी। उन्होंने बताया कि जिन 769 गैर सरकारी संगठनों को काली सूची में डाला गया है। इन संगठनों ने उन्हीं लाभार्थियों को शामिल करके उसी परियोजना के लिए एक से अधिक स्रोत से निधियां प्राप्त की हैं या किसी अन्य सरकारी गैर सरकारी अंतरराष्ट्रीय या किसी अन्य एजंसी से पूर्णतया या आंशिक रूप से निधियां प्राप्त करने के लिए आवेदन किया है। इनके प्रमुख पदाधिकारियों का आपराधिक आचरण सार्वजनिक निधियों के दुर्विनियोजन में शामिल होना, जाली लेखा दस्तावेज प्रस्तुत करना आदि गंभीर आरोप हैं। उन्होंने बताया कि 10 मामले सीबीआई को जांच के लिए भेजे गए हैं। 129 गैर सरकारी संगठनों के खिलाफ संबंधित थानों में रपट दर्ज कराई गई है और 31 गैर सरकारी संगठनों से अब तक 28.37 लाख रुपये वसूल किए गए हैं। दुरुपयोग किए गए अनुदानों की वसूली के लिए काली सूची में डाले गए अन्य संगठनों के खिलाफ रपट दर्ज कराई गई है।

बच्चों में हिंसक प्रवृत्ति के लिए दोषी है टी.वी. कार्यक्रम

टी.वी. कार्यक्रमों के माध्यम से बच्चों में बढ़ रही खतरनाक हिंसक प्रवृत्ति को देखने के बाद अब बच्चों को हिंसा को बढ़ावा देने वाले और अश्लीनता परोसने वाले कार्यक्रमों से दूर रखने की जरूरत महसूस की गई है। कच्ची उम्र में टेलीविजन और फिल्मों के खतरनाक दृश्यों को देखकर बच्चों में बढ़ रही हिंसक बनने की प्रवृत्ति को राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षक आयोग भी बुरी तरह से सहमा हुआ है। इसी भाव के चलते आयोग ने टीवी पर आपराधिक व अश्लील कार्यक्रमों पर रोक लगाने की हिमायत के साथ ही इसके कानूनी प्रावधान को भी जरूरी बताया है। आयोग का मानना है कि टी.वी. पर मारधाड़ खून खराबा, हत्या अथवा उग्रता प्रर्दशित करने वाले कार्यक्रम जहां सभी दर्शकों को प्रभावित करते हैं वहीं बच्चों के मामले में कुछ ज्यादा ही खतरनाक साबित होते हैं। राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एनसीपीआर) की सदस्य संध्या बजाज ने केन्द्रीय सूचना प्रसारण मंत्री प्रियरंजन दास मुंशी से इस मामले में हस्तक्षेप करने की मांग की है। श्रीमती बजाज ने दास मुंशी को लिखे पत्र में टी.वी. चैनलों पर दिखाए जाने वाले हिंसक कार्यक्रमों को रोकने के लिए प्रस्तावित ब्राडकास्टिंग रेगूलेशन बिल में जरूरी प्रावधान किए जाने की मांग के साथ यह भी कहा है कि मारपीट, तोड़फोड़ खून से लथपथ लोग और उनकी लाशें जानवरों के भी इस खतरनाक दृश्यों को बढ़ाचढ़ाकर दिखाया जाना खासकर युवा मन पर विपरीत प्रभाव छोड़ता है, इसे रोके जाने की सख्त जरूरत है।

प्रदूषण भी फैलाती हैं बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ

बहुराष्ट्रीय कंपनियां जहां किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के लिए सबसे बड़ा खतरा हैं और युवाओं के रोजगार को प्रभावित कर रही हैं वहीं चीन के एक गैर सरकारी संगठन 'द इंस्टीट्यूट आफ पब्लिक एंड एनवायरमेंटल अफेयर्स' की ओर से प्रस्तुत रपट में यह दावा किया गया है कि प्रदूषण फैलाने में भी बहुराष्ट्रीय कंपनियां सबसे आगे हैं। रपट में बताया गया है कि चीन में सबसे अधिक औद्योगिक प्रदूषण फैलाने का काम करने वाली कम्पनियों में पेप्सी, 3 एम, नैस्कैफे, यामहा, सैमसंग, केएफसी, पिजा हट रेस्तरां आदि नाम शामिल हैं। ए नाम वे हैं जो चीनी उपभोक्ताओं के लिए सबसे अधिक लोकप्रिय हैं। इनमें से आधी इकाइयां तो शंघाई में काम कर रही हैं जो

प्रत्यक्ष रोजगार का आधार हैं वैष्णों देवी

जम्मू कश्मीर स्थित वैष्णों देवी का मंदिर देश का प्रमुख धार्मिक स्थल है। हर धर्म का भक्त यहां पर आता है। यहा पर प्रतिवर्ष श्रद्धालुओं द्वारा कितना खर्च कर दिया जाता है, इसका आंकलन किया है आईआईटी, दिल्ली ने। तीन वर्ष की अवधि के दौरान किए गए आकलन के अनुसार यहां आने वाले श्रद्धालुओं से प्रतिवर्ष 475 करोड़ रूपये प्राप्त हो जाते हैं। यहां आने वाले श्रद्धालुओं से 27,000 लोगों को रोजगार मिला हुआ है।

आईआईटी, दिल्ली डिपार्टमेंट ऑफ मैनेजमेंट विभाग के डॉ. एस.के. जैन जिनके निर्देशन में यह आकलन किया गया है, के अनुसार कटरा में हॉस्पीटेलिटी क्षेत्र को 72.15 करोड़, परिवहन विभाग को 69.23 करोड़, घोड़ेवालों को 33.15 करोड़ एवं पिट्ठूवालों को 16.15 करोड़ की आय होती है। शोध के अनुसार यहा पर पोनी वालों की संख्या 4647 एवं पिट्ठुओं की संख्या 8,000 के करीब है। उल्लेखनीय है कि कटरा एक छोटा कस्बा है। प्रतिवर्ष यहां पर करीब 70 लाख श्रद्धालु आते हैं उनके माध्यम से यहां पर लोगों को रोजगार मिला हुआ है और यही उनके रोजगार का प्रमुख स्रोत है। स्थानीय निवासियों के लिए यहां आने वाले श्रद्धालु ही उनकी रोजी–रोटी का साधन हैं।

एक प्रशासनिक अधिकारी के अनुसार कटरा के अलावा जम्मू–ऊद्यमपुर–कटरा के विकास में मंदिर की अहम भूमिका है। कटरा का विकास तेजी से हो रहा है। यहां पर मूलभूत सुविधाओं का विकास भी हो रहा है, जैसे कि कटरा को रेलमार्ग से जोड़ने का काम चल रहा है ताकि लोगों का आवागमन यहां पर सहज हो सके। यही नहीं, यहां पर रेडीसन एवं व्हाईट ऑर्चिड जैसे नामी होटल भी खुल चुके हैं। कैफे कॉफी डे आउटलैट यहां पर खुल चुका हैं। कटरा में प्रति रात चालीस हजार लोगों के ठहरने की व्यवस्था है तथा इसे और बढ़ाये जाने के प्रयास हो रहे हैं।

जल, जंगल व जमीन बचाने के लिए आंदोलन का एलान

जल, जंगल और जमीन पर गरीबों का हक हासिल करने के लिए एकता परिषद् 2 अक्टूबर से देशभर में अहिंसक सत्याग्रह शुरू करेगी। इसके पहले चरण में 2 अक्टूबर को परिषद के कार्यकर्ता ग्वालियर से दिल्ली (राजघाट) की तरफ कूच करेंगे। परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष पीवी राजगोपाल ने बताया कि देश के दलित, आदिवासी एवं वंचित को अभी तक उनका हक नहीं मिला है। इसी हक के लिए परिषद निर्णायक सत्याग्रह शुरू कर रही है। राजगोपाल ने कहा कि सरकार की गलत नीतियों के कारण जीविका के मुख्य संसाधन जल, जंगल और जमीन गरीबों से छिनते जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि सरकारों की गलत आर्थिक और कृषि नीतियों की वजह से ये हालात पैदा हुए हैं। उन्होंने कहा कि अगर महात्मा गांधी की कृषि आधारित कृषि नीति का पालन करते हुए छोटे और ग्रामीण कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देते तो हमारे यहां गरीबी और भुखमरी जैसी समस्याएं नहीं होतीं।

उन्होंने कहा कि हमारे देश में इससे बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है कि अगर कोई दलित, आदिवासी गरीब व्यक्ति अपने गुजारे के लिए खेती करना चाहे तो सरकार के पास उसे देने के लिए एक–दो एकड़ जमीन तक नहीं हैं। लेकिन दूसरी तरफ अगर उद्योगपति कारखानो के लिए दो–चार हजार हैक्टेयर जमीन मांगता है तो सरकार उसे उदारता से उसकी शर्तों पर ही किसानों की जमीन अधिग्रहण कर उसे तत्काल मुहैया करा देती है। उन्होंने कहा कि इसी तरह सरकार आदिवासियों पर वनों के विनाश का आरोप लगाकर उन्हें जंगल के पुश्तैनी अधिकारों से वंचित कर रही है, जिससे आदिवासी समुदाय काफी त्रस्त है। सरकार व उसके नुमाइंदों ने कभी इन तथ्यों पर ध्यान नहीं दिया कि वनों के उजड़ने का मुख्य कारण आदिवासी नहीं होकर बल्कि वन विभाग व उसके ठेकेदार और बढ़ते उद्योग हैं। उन्होंने कहा कि गांधीवादी विचारधारा से जुड़े होने के कारण एकता परिषद का यह सत्याग्रह पूरी तरह व्यवस्थित और शांतिपूर्ण होगा।

कि चीन का सबसे बड़ा औद्योगिक और फाइनेंसियल केन्द्र कहा जा सकता है। काल्सबर्ग बीयर बेकरी को तियानशुई की स्थानीय सरकार ने इसलिए बंद करवा दिया था क्योंकि वह इस शहर में सबसे अधिक प्रदूषण फैलाने लगी थी।

किसानों की मौत बना प्रधानमंत्री का राहत पैकेज

प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह 31 अगस्त को महाराष्ट्र में विदर्भ के दौरे पर गए थे। उद्देश्य था पिछले वर्ष जुलाई में उनके द्वारा विदर्भ में ही जाकर घोषित किए राहत पैकेज से हुए कार्यों की समीक्षा करना। इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि प्रधानमंत्री की यात्रा के ठीक दो दिन पहले 24 घंटे के अंदर 10 किसानों ने आत्महत्या कर ली। इतना ही नहीं प्रधानमंत्री की दो विदर्भ यात्राओं के बीच वहां के 1350 से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं। औसतन हर घंटे में एक किसान आत्महत्या कर रहा है। इन आत्महत्याओं से साफ है कि प्रधानमंत्री का राहत पैकेज 3,750 करोड़ रुपया बेअसर साबित हो चुका है। कारण यह कि इस राहत पैकेज में किसानों के कर्ज माफी की बात शामिल नहीं थी। जबकि अधिकांश किसान कर्ज के बोझ से ग्रस्त होकर ही आत्महत्या कर रहे हैं। अब सवाल उठता है कि प्रधानमंत्री द्वारा घोषित इतने बड़े पैकेज के बाद भी आत्महत्याओं का दौर नहीं थम रहा है। इसका जवाब देते हुए जनांदोलन समिति के किशोर तिवारी ने बताया कि प्रधानमंत्री द्वारा 3750 करोड़ रुपयों के राहत पैकेज का आधा हिस्सा तो किसानों के कर्जदार बैंकों द्वारा वसूले जा रहे ब्याज की अदायगी एवं कुछ सिंचाई परियाजनाओं को पूरा करने में ही खर्च हो गया। इस वर्ष जनवरी से अब तक 624 से अधिक आत्महत्याएं हो चुकी हैं। इनका यह भी कहना है कि प्रधानमंत्री राहत पैकेज किसानों को राहत मिलने के बजाय उनकी मौत का कारण ही बना है।

साहूकारी ऋण से ग्रस्त ग्रामीण

देश में बैंकिंग उद्योग का विकास तेजी से हुआ है, पिछले कुछ वर्षों के दौरान लोगों में जागरूकता आई है, तथा ऋण साख आपूर्ति प्रणाली में काफी कुछ सुधार भी हुआ है। साहूकारों के चंगुल से मुक्ति दिलाने के लिए सरकारी प्रयास भी हो रहे हैं। लेकिन फिर भी ग्रामीण साहूकारी ऋण बोझ से ग्रस्त हैं। रिजर्व बैंक की रपट के मुताबिक कुछ वर्षों के दौरान साहूकारों व मनी लैण्डरों द्वारा दिए जाने वाले ऋण की मात्रा में तेजी आई है। अनेक राज्यों में मनीलैण्डर आज भी 40–50 प्रतिशत की दर से वार्षिक ब्याज की वसूली कर रहे हैं। रपट के अनुसार वर्ष 1995 में पंजीकृत मनीलैंडरों की संख्या 12601 थी, जो बढ़कर 2006 में 19627 हो गई। इसके साथ–साथ गैर पंजीकृत मनीलैंडारों की संख्या में भी तेजी के साथ वृद्धि हुई है। शहरी क्षेत्र में सरकार और रिजर्व बैंक ने सिटी फाइनेन्सियल, जीर्ड कन्ट्रीवाइड जैसी अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं को लूटने का प्रमाण–पत्र जारी कर दिया है और देश के मध्यम वर्ग व शहरी उपभोक्ताओं से ऑटोमोबाइल, उपभोक्ता उपकरणों की खरीद पर ग्राहकों से 25/30 प्रतिशत की दर से ब्याज की वसूली कर रहे हैं। ग्रामीणों को अनेक मजबूरियों के चलते आज भी साहूकारों व मनीलैंडरों के पास कर्ज के लिए जाना पड़ता है क्योंकि सरकारी बैंकों व निजी बैंकों से ऋण प्राप्त करना प्रत्येक जरूरतमंद के लिए आसान नहीं है।

तापमान में गर्मी खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा

बाढ़, ओले, वर्षात, और पाला जैसी प्राकृतिक आपदाओं को झेल रही भारत की

खाद्य सुरक्षा के लिए तापमान में लगातार हो रही वृद्धि भी एक खतरा पैदा कर सकती है। कृषि अनुसंधान परिषद के एक नए अध्ययन में इस बात का खुलासा हुआ है कि मौसम में बदलाव के चलते तापमान में लगातार हो रही वृद्धि खासकर गर्मी बढ़ने से सबसे अधिक गेहूं, का उत्पादन प्रभावित होने वाला है। अध्ययन रपट के मुताबिक अगर तापमान में एक डिग्री का भी इजाफा हुआ तो देश का गेहूं उत्पादन चालीस से पचास टन कम हो सकता है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार तापमान में वृद्धि से इस वर्ष ऑस्ट्रेलिया में गर्मी के कारण गेहूं उत्पादन बुरी तरह प्रभावित हुआ है। कृषि अनुसंधान परिषद ने देश के सभी कृषि विश्वविद्यालयों को यह सलाह दी है कि वे खाद्य उत्पादन को बरकरार रखने के लिए बीजों के अनुसंधान पर अधिक से अधिक ध्यान दें। परिषद के अनुसार आने वाले पांच वर्षों में देश को ऐसे बीजों की जरूरत बड़ी मात्रा में होगी जो अधिक गर्मी सहन करने में सक्षम होंगे, वैज्ञानिकों के मुताबिक चार–पांच वर्षों में गेहूं के बीजों में ऐसे जीन विकसित किए गए हैं जो गर्मी को सहने की क्षमता रखते हैं।

कर्ज के बोझ से दबे हैं देश के आधे किसान

देश में आर्थिक सुधार के बड़े–बड़े दावे किए जा रहे हैं, कृषि को उन्नति की दिशा में ले जाने के भी बड़े–बड़े प्रयास किए जा रहे हैं। जिसके प्रचार–प्रसार के लिए करोड़ों रुपया खर्च किया जाता है। इसके बावजूद कृषि राज्य मंत्री कांतिलाल भूरिया ने स्वीकार किया है कि देश का लगभग आधा किसान कर्ज के बोझ से दबा है और आत्महत्या कर रहा है। राज्यसभा में एक सवाल के जवाब में जानकारी देते हुए कृषि राज्य मंत्री ने बताया कि देश के लगभग 48.6 फीसदी किसान परिवार ऋण के बोझ से दबे हैं जबकि आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में तो यह प्रतिशत 82 तक पहुंच गया है। कृषि राज्य मंत्री ने राज्यसभा को बताया कि कृषि ऋणग्रस्तता को सुलझाने और किसानों को राहत प्रदान करने के लिए सरकार ने इंदिरा गांधी विकास अनुसंधान संस्थान के निदेशक की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ दल का गठन किया था। इस दल ने रपट प्रस्तुत कर दी है और सरकार इसकी सिफारिशों पर कार्रवाई कर रही है। इससे पूर्व कृषि मंत्री शरद पवार ने सदन को बताया कि राज्यों में कृषि ऋण से पीड़ित क्षेत्रों की पहचान का कोई प्रस्ताव तो नहीं है, लेकिन आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक और केरल जैसे चार राज्यों में ऐसे 31 जिलों की पहचान की गई है जहां आत्महत्या की प्रवृत्ति अधिक है। बतौर कृषि मंत्री इन क्षेत्रों में तीन वर्षों में अमल में लाया जाने वाला पुनर्वास कार्यक्रम चलाया जा रहा है। आत्महत्या करने वाले किसानों के परिवारों को राहत देने के लिए प्रधानमंत्री राष्ट्रीय राहत कोष से 50 लाख रुपए अग्रिम सहायता भी दी गई है। कृषि मंत्री के मुताबिक सरकार ने हाल ही में कृषि के लिए दो नई योजनाओं को हरी झंडी दी है। पहली, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, जिसके तहत धान गेहूं व दालों का उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाई जाएगी। दूसरी, अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता योजना, जिसके तहत राज्यों को कृषि में अधिक निवेश करने और उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन दिया जाएगा।

राज्यवार कर्जदार किसान

राज्य		प्रतिशत
आंध्र प्रदेश	:	82
तमिलनाडु	:	74.5
पंजाब	:	65.4
केरल	:	64.4
कर्नाटक	:	61.6
महाराष्ट्र	:	54.8
हरियाणा	:	53.1
राजस्थान	:	52.4
गुजरात	:	51.9

हिमाचल में सेज विरोधी आन्दोलन का निर्णय

भारत सरकार की कृषि, व्यापार व शिक्षा के क्षेत्र में लागू की जा रहीं देश व संस्कृति विरोधी, नुकसानदायी नीतियों के खिलाफ स्वदेशी जागरण मंच द्वारा 15 सितम्बर से 15 अक्तूबर के बीच हिमाचल प्रदेश में जनजागरण अभियान के अन्तर्गत कार्यक्रम किए जाएंगे। यह जानकारी हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर जिला मुख्यालय में पत्रकार वार्ता करते हुए मंच के अखिल भारतीय टोली के सदस्य व उत्तर क्षेत्रीय संगठक कश्मीरी लाल ने दी। वे वहां इन कार्यक्रमों को तय करने के लिए रखी गई प्रान्त संचालन समिति की दो दिवसीय बैठक में भाग लेने आए थे। उन्होंने बताया कि दुनिया के 94 प्रतिशत संसाधन 40 प्रतिशत लोगों के पास हैं व अन्य 60 प्रतिशत लोग सिर्फ 6 प्रतिशत संसाधनों का प्रयोग करते हैं। यह एक विकट समस्या है तथा भारत की दर्शायी जाने वाली 9.4 प्रतिशत की विकास दर क्षण भंगुर है क्योंकि विकास का तरीका टिकाऊ नहीं है।

स्वदेशी जागरण मंच के हिमाचल प्रान्त के संयोजक देशबन्धु ने बताया कि हिमाचल प्रदेश के ऊना, काँगड़ा व सोलन जिलों में 'सेज' के अन्तर्गत भूमि अधिग्रहण के प्रयास चल रहे हैं, जिनका स्वदेशी जागरण मंच दृढ़ता से विरोध कर रहा है। उन्होंने बताया कि प्रान्त संचालन समिति की दो दिवसीय बैठक में तय किया गया कि सरकार की इन देश विरोधी नीतियों के खिलाफ 15 सितम्बर से 15 अक्टूबर के बीच पूरे प्रदेश में स्थान–स्थान पर पत्रक वितरण के साथ रैलियां निकाली जाएंगी व पुतला दहन कार्यक्रम करके जन–जागरण अभियान चलाया जाएगा। जिसकी रूपरेखा बना ली गई है। उन्होंने बताया कि ''सेज'' के विरोध में पूरे देश में चलने बाली ''भूमि रक्षा यात्रा'' सितम्बर में हिमाचल प्रदेश के ऊना जिला से गुजरेगी। उन्होंने बताया कि 7 से 9 दिसम्बर को इंदौर में होने वाले स्वदेशी जागरण मंच के राष्ट्रीय सम्मेलन में हिमाचल प्रान्त से 200 कार्यकर्ता जाएंगे।

भारतीय कृषि को बचाएंगे

भारतीय कृषि को बचाने के लिए देशभर के कृषि स्वयंसेवी व नागरिक संगठनों ने एकजुट होकर डब्ल्यूटीओ वार्ता के लिए तैयार कृषि मसौदे को खारिज कर सरकार से श्वेतपत्र जारी करने की मांग की है। किसानों ने मांग की है कि भारतीय खेती को बचाने के लिए कृषि जिंसों के आयात पर फिर से मात्रात्मक प्रतिबंध लगाया जाए और उदारीकरण की प्रक्रिया में स्वयंसेवी व नागरिक संगठनों की ओर से दिल्ली में 'दोहा डब्ल्यूटीओ वार्ता का भारत पर क्या असर पडेगा' विषय पर आयोजित सेमिनार में राज्यसभा सदस्य व वरिष्ठ कृषि वैज्ञानिक एम.एस. स्वामीनाथन का कहना था कि खाद्य संप्रभुता के बिना किसी भी देश की राजनीतिक संप्रभुता नहीं होती है। अगर डब्ल्यूटीओ समझौते के पालन से किसानों के जीवन में असुरक्षा का भाव बढ़ता है, तो भारत को मात्रात्मक प्रतिबंध लागू करना चाहिए। देश में कृषि विविधिकरण के तहत नकदी फसलों के लिए चलाए जा रहे अभियान पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि हमारी कृषि व्यापार नीति आयात कम करने वाली होनी चाहिए। बार–बार गेहूं आयात की स्थिति से बचने के लिए देश को कनाडा की तरह नियम बनाना चाहिए जहां किसानों से गेहूं खरीदने का अधिकार सरकारी कंपनी को ही हो।

असोम का मूंगा सिल्क असली

एक लम्बी प्रतीक्षा के बाद असोम के चमकीले, सुनहले मूंगा सिल्क को बौद्धिक संपदा अधिकार के तहत भौगोलिक पहचान दी गई है और कहा गया है कि यही मूंगा असली मूंगा है। बदले हुए वैश्विक वाणिज्य एवं व्यापार के माहौल में जहां हर उत्पाद को हड़पने एवं अपने नाम कर लेने की होड़ विभिन्न देशों में मची है, असोम के मूंगा सिल्क को उसकी पहचान का अधिकार मिलने से स्थानीय समुदाय को इसका लाभ मिलेगा और इस व्यवसाय से जुड़े लोगों की जीविका बच जाएगी। ज्ञातव्य हो कि भारत बासमी, हल्दी, नीम, करेला आदि मामले में विश्व व्यापार संगठन के अधीन कई बार परेशानी में पड़ चुका है।

असम के विज्ञान तकनीक एवं पर्यावरण परिषद ने भारत सरकार के भौगोलिक संकेतक विभाग से आवेदन किया था कि वह मूंगा को भौगोलिक संकेतक के अधीन पंजीकृत कर उसे असम का उत्पाद घोषित करे। हाल ही में असोम सरकार ने अपने यहां पेटेंट सूचना केन्द्र नाम से एक प्रमुख केन्द्र की स्थापना की है। भारत सरकार ने असोम के आवेदन को भौगोलिक संकेतक पंजीकरण कार्यालय चेन्नै भेजा। वहां मिली संस्तुति के बाद अब मूंगा असोम राज्य का पंजीकृत हो गया है। अब मूंगा उत्पादन, विपणन से जुड़े लोग ही मूंगा के अधिकृत मालिक कहे जाएंगे।

अंकटाड की सलाह
शोषक हैं अमीर देश

अंकटाड ने भारत सहित अन्य विकासशील देशों को आगाह किया है कि वे अमीर देशों के साथ द्विपक्षीय अथवा क्षेत्रीय मुक्त व्यापार समझौता करने से बचें। यह चेतावनी ऐसे समय में आई है जब भारत यूरोपीय संघ, जापान व दक्षिण कोरिया जैसे धनी देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौता और आर्थिक सहयोग समझौता करने के बारे में बातचीत कर रहा है। 2007 की विकास व व्यापार रपट में अंकटाड ने भारत सहित सभी विकासशील देशों को सावधान किया है कि वे मुक्त व्यापार समझौते को केवल निर्यात और आयात पर पड़ने वाले असर के नजरिए से न देखें, बल्कि उन्हें इन समझौतों को वैकल्पिक योजनाएं लागू करने की क्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव के रूप में भी देखना चाहिए। इस रपट में चालू वित्त वर्ष के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास दर 8.5 फीसद रहने की भी भविष्यवाणी की गई है। इस रपट में विकासशील देशों को यह भी सुझाया गया है कि वे वैकल्पिक विकास योजनाओं को लागू करने का विकल्प अपने पास रखें। विश्व व्यापार संगठन में बहुपक्षीय व्यापार वार्ता से पहले ही परेशानी उठा रहे विकासशील एवं अल्प विकसित देशों के लिए अंकटाड की यह खबर चिंताजनक है।

दोहा दौर की वार्ता सफल होने की अच्छी संभावना : हर्षवर्धन

भारत की स्थिति बहुत सुविधाजनक है और दोहा दौर की वार्ता में इसकी प्रमुख चिंताओं का समाधान काफी हद तक किया जा चुका है। दोहा दौर की वार्ता अंतिम दौर में पहुंच चुकी है और इसके सफलतापूर्वक समाप्त होने की काफी अच्छी संभावना है। विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) के उपमहानिदेशक डॉ हर्षवर्धन सिंह ने सोमवार को वाणिज्य व उद्योग संगठन फिक्की में आयोजित एक कार्यक्रम में यह बात कही।

डॉ. हर्षवर्धन ने कहा कि सितंबर में फिर से शुरू होने वाली वार्ता का नतीजा अक्टूबर के प्रारंम्भ में मालूम हो जाएगा। उन्होंने कहा कि डब्ल्यूटीओ के सदस्य देश आगे बढ़ने के इच्छुक हैं, विचारों में समानता हो चुकी है और विवादास्पद मुद्दों पर बातचीत के लिए जमीन तैयार हो चुकी है। डॉ. सिंह ने कहा कि मध्य जुलाई में जारी हुए प्रारूप प्रस्ताव में दो प्रमुख राजनीतिक पहलू हैं पहला, इन प्रस्तावों में अत्यंत गरीबी विकासशील देशों के लिए काफी कुछ है और दूसरा, कारोबारी पहल के लिए सहायता भी अत्यंत गरीब देशों के लिए वरदान साबित होगी। इसमें पारदर्शिता पर जोर है, आपूर्ति पक्ष की क्षमता विकसित करने की बात है और ज्यादा आर्थिक सहायता की संभावना पर बल दिया गया है। डॉ. सिंह ने कहा कि कृषि मुद्दे पर भारत की चिंताओं का काफी हद तक समाधान किया गया है और कृषि पर प्रारूप से यह पता चलता है कि लचीलेपन के पहलू को किस संवेदनशीलता के साथ प्रदर्शित किया गया है। नामा के मुद्दे पर उन्होंने कहा कि भारत की स्थिति बहुत सुविधाजनक है और हम लक्ष्य के काफी करीब हैं। इस अवसर पर फिक्की मैनुफैक्चरिंग कमेटी के अध्यक्ष और जे. के. पेपर लिमिटेड के प्रबंध निदेशक हर्षपति सिंहानिया ने कहा कि अपने वर्तमान स्वरूप में नामा का प्रारूप भारतीय उद्योग व कारोबार जगत को स्वीकार्य नहीं हो सकता, क्योंकि इसमें विकासशील देशों की चिंताओं को प्रकट नहीं किया गया है और कई मायनों में यह दोहा घोषणापत्र के साथ संगत नहीं है।